चन्दामामा
फरवरी १९९७

चन्दामामा

फ़रवरी १९९७

एक प्रति : ६.००
वार्षिक चंदा : ७२.००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

हँसी-मज़ाक़ अब और नहीं

विद्यार्थी साधारणतया परीक्षाओं से डरते हैं। आजकल ज़बरदस्ती व हिंसा-भरे हँसी-मज़ाक से भी उन्हें बहुत डर लगने लगा है। पूर्व हँसी-मज़ाक़ में सिर्फ सताते थे, पर आजकल इसी हँसी-मज़ाक ने भयंकर रूप धारण किया, जिसका खंडन, विरोध और निंदा की जा रही है।

ज्येष्ठ विद्यार्थी, नये-नये आये विद्यार्थियों पर अपने करतब दिखाने लग जाते हैं। हर वर्ष कालेजों में भर्ती होने आये नये विद्यार्थी अपने ज्येष्ठ विद्यार्थियों से अपने सत्संबंध जोड़ना चाहते हैं किन्तु वे ज्येष्ठ विद्यार्थियों के हाथों बड़ी ही निर्दयता से सताये जाते हैं। क्रूरता-भरे उनके हँसी-मज़ाकों के वे शिकार बनते हैं। नये विद्यार्थियों पर पानी उंडेला जाता है अथवा कीचड़ फेंककर उनके नये कपड़ों को गंदा किया जाता है। रात में सोते हुए नये विद्यार्थियों को तकिये से पीटा जाता है। उनके हँसी-मज़ाक़ के ये एक दो उदाहरण मात्र हैं। नयों को गाने या नाचने पर मजबूर किया जाता है। सच कहा जाए तो ये सब हँसी-मज़ाक की परिधि में ही हैं। इनसे कोई हानि नहीं होती। उल्टे ज्येष्ठ व कनिष्ठ विद्यार्थियों में मैत्री बढ़ती है।

परंतु वर्तमान स्थिति एकदम भिन्न है। ज्येष्ठ विद्यार्थी अपनी सीमाओं को लाँघ रहे हैं और नये आये विद्यार्थियों का खुलेआम घोर अपमान कर रहे हैं, जिससे वे कालेज छोड़कर चले जा रहे हैं। यह अपमान कभी-कभी इतना भयंकर होने लगा है कि वे आत्महत्या या कत्ल करने में भी आगा-पीछा नहीं कर रहे हैं। तमिलनाडु में हाल ही में ऐसी घटना हुई, जिस वजह से राज्य-सरकार ने इस गंदी आदत पर रोक लगा दी। शैक्षिक अधिकारी तथा माता-पिता भी इस दिशा में गंभीर रूप से सोच रहे हैं। तमिलनाडु सरकार ने इसका बहिष्कार करते हुए अध्यादेश भी निकाला, जिसमें स्पष्ट किया गया है कि अपनी सीमाओं को लाँघकर अनुचित हँसी-मज़ाक़ करनेवाले को कड़ी-सी कड़ी सज़ा दी जायेगी। ऐसे भयानक दुर्व्यवहार को रोकने के लिए सारे भारत में अध्यादेश ले आने की बात चल रही है।

पहले स्कूलों और कालेजों में विद्यार्थियों के बीच जो मैत्रीपूर्ण संबंध थे, क्या अब हैं?

वर्ष : ४७ फ़रवरी १९९७ अंक : ५

एक प्रति : रु. ६/- वार्षिक चन्दा : रु ७२/-

समाचार - विशेषताएँ
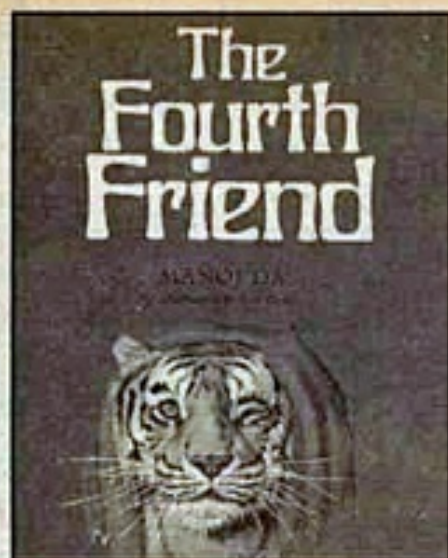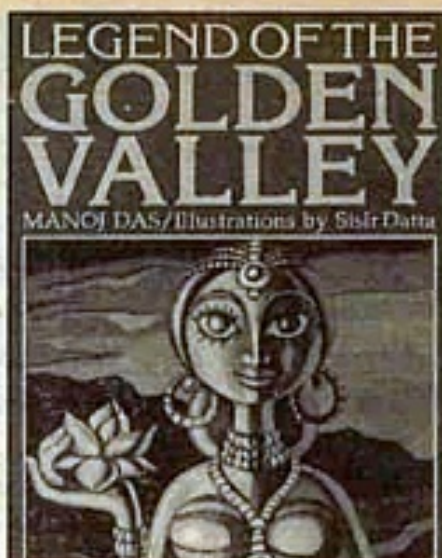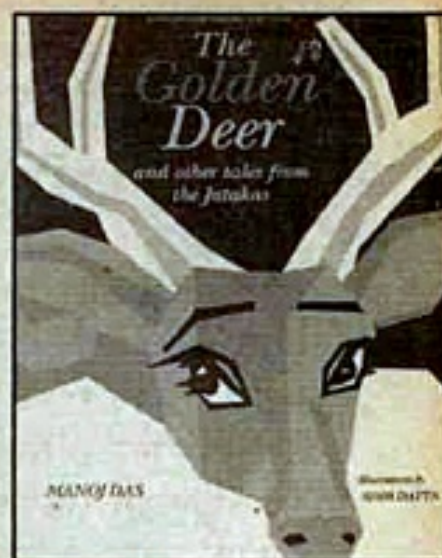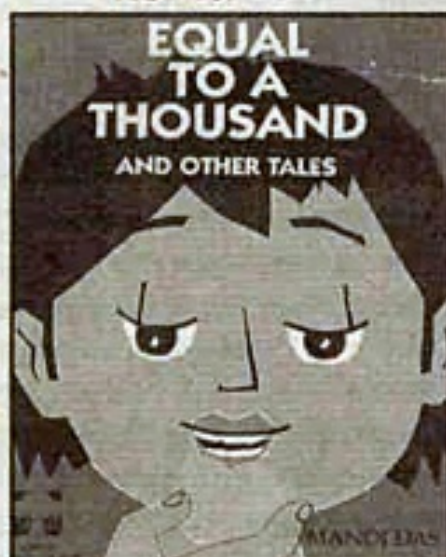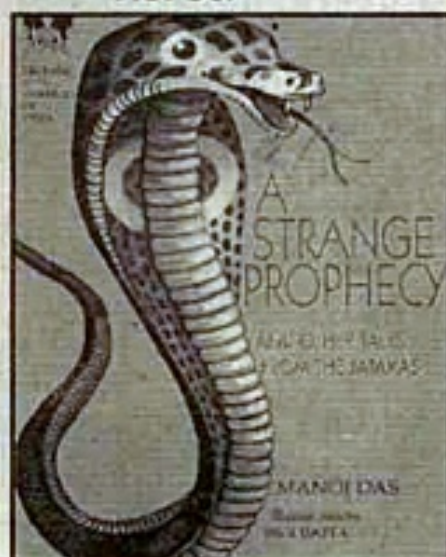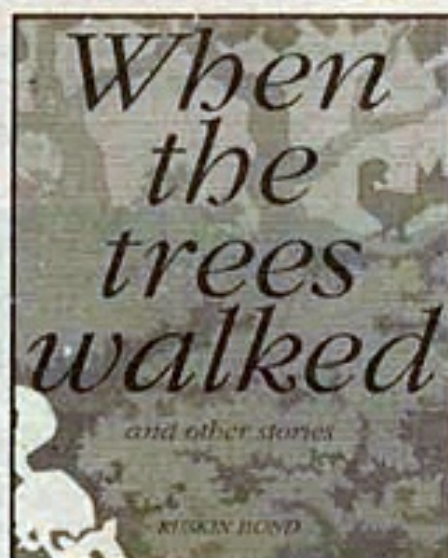
युनैटेड अरब एमिरेट्स

भारत के इतिहास का पठन करनेवाले विद्यार्थियों को हमारे देश के सात ईशानी राज्यों के बारे में मालूम ही होगा। उसी प्रकार सिंधु शाखा परिसरों में सात देश हैं। उन्हें 'सेवेन सिस्टर्स' कहते हैं। आजकल वे संयुक्त युनैटेड अरब एमिरेट्स (यु.ए.ई.) कहे जाते हैं। रासअल खायमा, उमाल खायवान, अज़मान, षार्जा, दुबाय, अबुधाभी, पुजायरा नामक ये सातों देश उत्तरी दक्षिण में व्याप्त हैं। युनैटेड अरब एमिरेट्स ने दिसंबर, २ को रजतोत्सव मनाया।

एक सौ पचास साल पहले इन देशों को 'ट्रूसियल स्टेट्स' के नाम से पुकारते थे। १८२० के आरंभ में ब्रिटेन के साथ एक समझौता हुआ, जिसके फलस्वरूप उसका यह नाम पड़ा। स्थानीय शासकों ने एक समझौता किया, जिसके अनुसार ब्रिटेन अपनी सेनाओं को वहाँ ठहरा सकता है। अबुधाभी के षेक जायेद खलीफा अल नाह्‌यान सुदीर्घ काल तक (१८५५ से १९०९) शासन-भार संभालते रहे। एमिरेट्स के वर्तमान अध्यक्ष के भाई षेक षक्रट १९२८ में सिंहासन पर आसीन हुए। उनके भाई षेक जायेद ने मज़हबी गुरू से विद्या प्राप्त की और रेगिस्तान में विस्तृत रूप से पर्यटन किया। षेक ने उन्हें बताया कि वे उन ब्रिटिश संस्थाओं को मदद पहुँचायें, जो रेगिस्तान में तेल के कुएँ खोद रहे हैं। उन्होंने तेल उद्योग के बारे में ख़ास जानकारी पायी। जान भी लिया कि तेल के ये कुएँ ही अपने देश के भविष्य को उज्वल बना सकते हैं।

इतने में वे पूर्वी प्रांतों में षेक के प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त हुए। उनकी जिम्मेदारियाँ और बढ़ गयीं। अल-आमिन प्रांत को व्यावसायिक भूमि बनायी। इससे उस प्रांत के लोगों के सामाजिक जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ।

१९९६, अगस्त, ६ तारीख को वे अबुधाभी के शासक बने। तेल के कुओं से मिलनेवाली आमदनी से उन्होंने प्रजा की भलाई के लिए आवश्यक योजनाएँ बनायीं और देश की अभिवद्धि के लिए भरसक प्रयास किया। ब्रिटेन ने सिंधु शाखा से अपनी सेनाओं को हटाना चाहा इसलिए समझौते भी सुगमता से संपूर्ण हुए। षेक जायेद बाक़ी छे देशों के नेताओं से स्वयं मिले और उन्हें समझाया कि सातों देशों का एक फेडरेशन कितना जरूरी है।

१९७१ जुलाई, १८ को सातों देशों को मिलाकर युनैटेड अरब एमिरेट्स कहा जानेवाला फेडरल स्टेट के गठन का निर्णय हुआ, जिसे ऐतिहासिक निर्णय कहा जा सकता है। चार महीनों के बाद दिसंबर २, को यह निर्णय अमल में आया। अबुधाभी षेक जायेद बिन सुल्तान एमिरेट्स के अध्यक्ष चुने गये। हर पाँच सालों के बाद वे ही पुनः अध्यक्ष चुने जा रहे हैं।
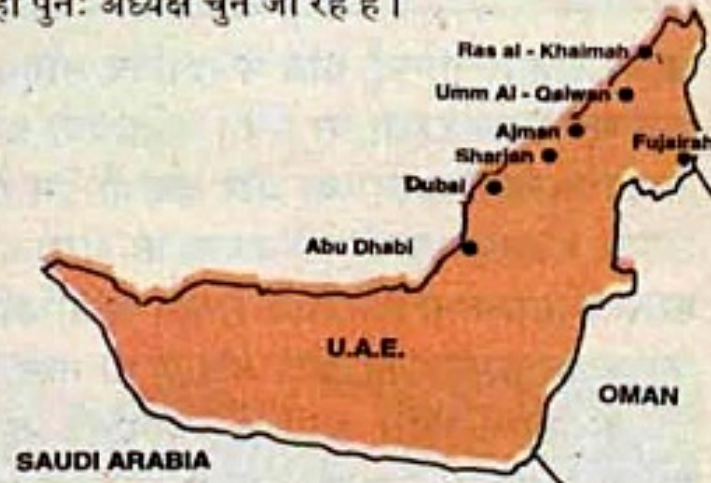
फेडरेशन बनने के बाद सातों देशों ने विविधि क्षेत्रों में त्वरित गति से प्रगति की। उदाहरण के लिए विद्या-क्षेत्र को ही लें। १९७१ में वहाँ केवल १४७ पाठशालाएँ ही थीं। व्यावसायिक कालेज या विश्वविद्यालय नहीं थे। अब ९९० से अधिक पाठशालाएँ हैं। अल अमिन में १९७७ में एमिरेट्स विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। इस विश्वविद्यालय में लगभग पंद्रह हज़ार विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। उल्लेखनीय बात यह है कि इसमें विदेशों के कुछ विद्यार्थी भी हैं। देश की ८४ प्रतिशत प्रजा शिक्षित हैं। मध्य प्राच्य देशों में से यु.ए.ई. के बच्चे ही तंदुरुस्त होते हैं। १९९६ में यूनिसेफ द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट में इस बात की पुष्टि की गयी।
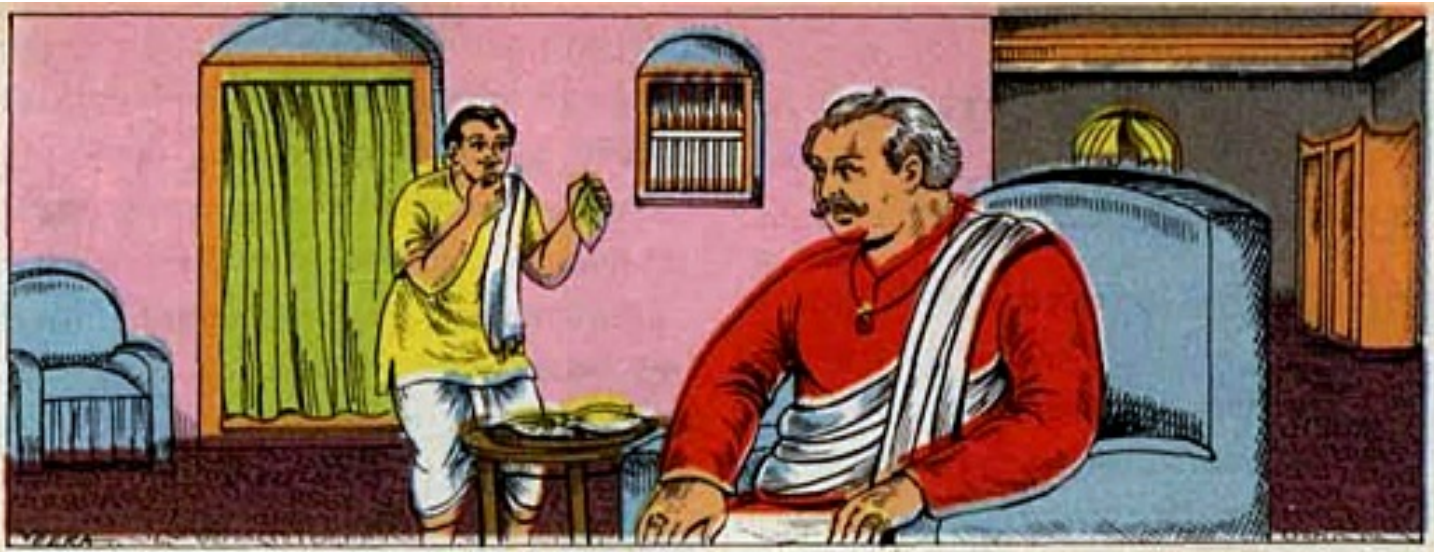
अतिथि का आदर

कभी क्षेत्रपुर नामक गाँव में सर्पानंद नामक एक भाग्यवान रहता था। वह अतिथियों का आदर-सत्कार करता था और बड़े ही प्रेम से उनकी आवश्यकताएँ पूरी करता था। उसका प्रबल विश्वास था कि उसके समान अतिथियों का आदर करनेवाला कोई और है ही नहीं।

जो भी अतिथि आते थे, सर्पानंद की प्रशंसा करने के बाद ही लौटते थे। इसपर उसे बड़ी ही खुशी होती थी। किन्तु एक बार गोपाल ने अतिथि-सत्कार पाने के बाद कहा ''श्रीपुर के रंगनाथ के बाद अतिथि-सत्कार में किसी का नाम बताना हो तो आप ही का नाम बताया जायेगा।''

श्रीपुर के रंगनाथ को अतिथि-सत्कार में सर्वप्रथम कहकर गोपाल ने उसके मन को दुख पहुँचाया। मन ही मन दुखी होते हुए उसने गोपाल से पूछा ''ये रंगनाथ कौन हैं? उनकी विशिष्टता क्या है?''

आश्चर्य में डूबे गोपाल ने कहा ''क्या आपको रंगनाथ के बारे में कुछ भी मालूम नहीं? अतिथि-सत्कार में उनकी बराबरी का कोई है ही नहीं। उनकी विशिष्टता शब्दों में गूँथी नहीं जा सकती। एक बार श्रीपुर हो आइये। आप स्वयं जान जाएँगे।''

सर्पानंद से रहा नहीं गया। दूसरे ही दिन वह निकल पड़ा और श्रीपुर पहुँचा। पता लगाकर रंगनाथ के घर गया।

रंगनाथ का छोटा-सा खपरैलों का घर था। बाहर चबूतरे पर ही वह बैठा हुआ था। सर्पानंद को देखते ही उसने बातें की और विवरण जाना। सर्पानंद ने अपने बारे में सच्चाई छिपायी और अपने को हीरों का व्यापारी बताया।

''हीरे बेचने हों तो शंभुनाथ के घर जाइये। वे ऐसा इंतज़ाम करेंगे, जिससे आपको अधिकाधिक लाभ होगा। आपके

शारदा भटनागर

हीरों को अच्छी क़ीमत मिलेगी। हीरों का मूल्य आँकने में उनकी बराबरी का कोई है ही नहीं।'' रंगनाथ ने सलाह दी।

सर्पानंद ने फ़ौरन पूछा ''आपका अतिथि बनकर रहूँ तो आपको कोई एतराज तो नहीं है न? ''महाशय, देखने में आप बहुत बड़े आदमी लग रहे हैं। मैं तो ग़रीब हूँ। मैं यथोचित स्वागत-सत्कार नहीं कर पाऊँगा'' अपनी अशक्तता जताते हुए रंगनाथ ने कहा।

''मैं आप ही के घर में रहना चाहता हूँ। मेरा आपके यहाँ रहना पसंद नहीं हो तो बता दीजिये। मैं शंभुनाथ के घर ठहरूँगा।'' सर्पानंद ने कहा।

रंगनाथ ने तुरंत सर्पानंद को सादर अंदर बुलाया और पिछवाड़े में ले जाकर पाँव धोने के लिए पानी दिया। थोड़ी ही देर में रंगनाथ की पत्नी ने भोजन का प्रबंध किया। पकवान नहीं थे, पर पदार्थ रुचिकर थे।

भोजन करने के बाद सर्पानंद ने, शंभुनाथ के घर जाने की अपनी इच्छा प्रकट की। किन्तु रंगनाथ ने मना करते हुए कहा ''आप तो मेरे ही घर रहना चाहते हैं। आज के दिन मेरे घर में आपका आदर सम्मान होगा। बाद ही आप कहीं और जा सकेंगे।''

सर्पानंद की समझ में नहीं आया कि पूरा दिन यहीं कैसे रह सकूँगा। उसने सोचा ''रंगनाथ का अतिथि-सत्कार तो बिल्कुल ही साधारण है। अपने घर में जो अतिथि आते हैं, उनके लिए अनेकों पकवान बनवाता हूँ और प्रेम से खिलाता हूँ। किन्तु गोपाल को रंगनाथ का अतिथि-सत्कार ही क्यों सर्वश्रेष्ठ लगा?'' वह इसी सोच में मग्न हो गया।

तब रंगनाथ के परिवार के सब सदस्य वहाँ आये। वहाँ उपस्थित सदस्यों में रंगनाथ
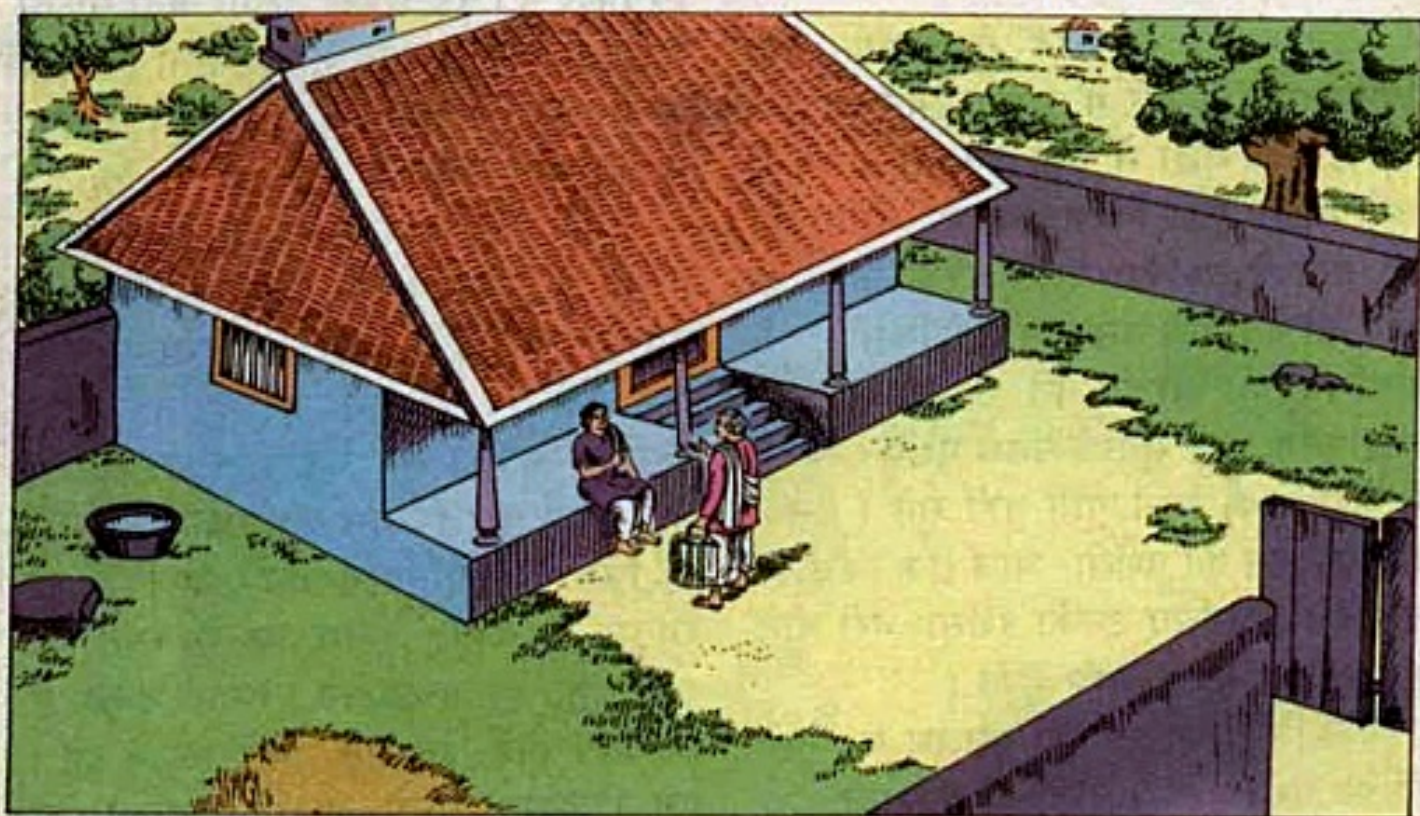
की पत्नी, उसके बच्चे और उसका भाई भी था।

उन सबने सर्पानंद से क्षेत्रपुर की विशेषताओं के बारे में पूछा। उसने जो कुछ कहा, बड़ी श्रद्धा से सुना। बातों-बातों में उन्हें मालूम हुआ कि सर्पानंद को संगीत का भी ज्ञान है तो जबरदस्ती करके उससे दो गीत भी गवाया। उस दिन तक किसी ने भी सर्पानंद की बातों को ध्यान से और श्रद्धापूर्वक नहीं सुना। उससे पूछकर किसी ने आज तक उससे गीत नहीं सुने। उसके संगीत-ज्ञान की प्रशंसा आज तक किसी ने नहीं की। इसलिए उनकी प्रशंसा-भरी बातें सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुआ।

''अतिथि-सत्कार का मतलब यह नहीं कि पेट भर खिलायें। अतिथियों की बातें श्रद्धा से सुननी चाहिये और उनकी विद्वत्ता को प्रदर्शित करने का अवकाश देना चाहिये। यही असली आतिथ्य है'' सर्पानंद ने मन ही मन सोचा।

इसके बाद उसने रंगनाथ के परिवार के सदस्यों से उस गाँव की विशेषताएँ पूछीं। रंगनाथ ने उत्तर में कहा ''हमारे गाँव में पुराने मंदिर हैं। फलों के बग़ीचे हैं। बहुत पहले का एक क़िला भी है। आपको अगर इन्हें देखने में कोई अभिरुचि हो तो बताइये, हमारे बच्चे आपको घुमा ले आयेंगे। किन्तु आप अवश्य ही थक जाएँगे, क्योंकि बहुत दूर चलना होगा।''

सर्पानंद को सचमुच गाँव देखने का कोई इरादा नहीं था। इसलिए उसने थकावट का बहाना बनाया और उनसे पूछकर जाना कि वे किन-किन विद्याओं में प्रवीण हैं। रंगनाथ चित्रकार है। वह अच्छी तस्वीरें बना सकता है। उसकी पत्नी बहुत अच्छा गाती है। भाई कविता सुना सकता है। बच्चे मिट्टी से सुंदर गुड़ियाँ बना सकते हैं।

सर्पानंद ने अपनी इच्छा ज़ाहिर की कि मैं सबकी दक्षता देखना चाहूँगा। रंगनाथ ने उसकी इच्छा को टालने के उद्देश्य से कहा ''आपकी थकावट अभी तक दूर नहीं हुई। इसलिए आपको तंग करना अच्छा नहीं। आज आप पूरा विश्राम कीजिये।''

फिर भी सर्पानंद ने जब ज़ोर दिया तो रंगनाथ ने कहा ''हमारे घर के सबों को आप बहुत ही अच्छे लगे। हमारी इच्छा है कि आप थोड़े दिन और हमारे घर में रहें। हम रोज़वार अपनी-अपनी विद्याओं का

प्रदर्शन करेंगे। हाँ, जब तक ये कार्यक्रम पूरे नहीं होते तब तक आपको हमारे ही घर में रहना होगा।''

सर्पानंद उनके इस प्रस्ताव पर बहुत प्रसन्न हुआ। उसे अब मालूम हुआ कि अतिथि को अपने बारे में बताने के लिए गृहस्थी को कैसे पेश आना चाहिये। उसने निर्णय किया कि आगे से मैं भी अपने बारे में अतिथियों से कुछ नहीं बताऊँगा। साथ ही वह समझ भी गया कि घर आये अतिथि को दो-तीन दिनों तक अपने ही यहाँ ठहराने के लिए कितनी ईमानदारी और तत्परता चाहिये। ऐसा नहीं कि इस प्रतीक्षा में रहें कि अतिथि कब लौटकर चला जायेगा।

रंगनाथ की पत्नी ने सर्पानंद को रात के भोजन में उसकी पसंद की तरकारियाँ बनायीं। दुपहर को बातों-बातों में उसने जान लिया, इसीलिए वह उसकी मनपसंद तरकारियाँ बना पायी।

भोजन के बाद सब एक जगह पर बैठे और गपशप करते रहे। बाद रंगनाथ, सर्पानंद को एक खाली कमरे में ले गया और कहा ''आपकी कोई अपूर्ण इच्छा हो तो बताइये, पूर्ण करूँगा।''

यह तो असंभव बात है। क्योंकि रंगनाथ साधारण व्यक्ति है और सर्पानंद धनी, संपन्न। भला वह उसकी इच्छा पूरी कैसे कर सकेगा? उसे सबक़ सिखाने के उद्देश्य से सर्पानंद ने कहा ''यों पूछना आपको शोभा नहीं देता। मुझे भी इस बात का दुख होगा कि क्यों मैंने ऐसी इच्छा प्रकट की, जिसकी पूर्ति आप नहीं कर पाये। आपको भी इस बात पर दुख होगा कि अतिथि की इच्छा आप पूरी नहीं कर पाये। कोई भी हो, क्या यह समुचित नहीं कि वे अतिथि को अपने सामर्थ्य के बल पर ही वचन दें।''

"आपका कहा सौ फ़ी सदी सच है। मैं पूरी कर सकूँगा, इसीलिए मैंने आपसे पूछने का साहस किया। आप नित्संकोच बताइये कि आपकी क्या इच्छा है?"

"देवलोक जाकर अप्सराओं का नृत्य देखने की इच्छा रखता हूँ।" सर्पानंद ने कह दिया इस स्वर में, मानों वह इच्छा पूरी होगी ही नहीं।

रंगनाथ ने उसे पलंग दिखाकर कहा "आप विश्राम कीजिये। आपकी इच्छा पूरी होगी।" कहकर वह कमरे से बाहर चला गया।

सर्पानंद पलंग पर लेटा हुआ था। दूसरे ही क्षण वह सो गया। उस नींद में उसने एक सपना देखा। उस सपने में वह देवलोक गया। वहाँ नाचती हुई अप्सराओं को देखा। दूसरे दिन सबेरे जब वह उठा तब बड़ा ही संतृप्त दिखने लगा। रंगनाथ से मिला, अपनी कृतज्ञता जतायी और उससे पूछा कि वह ऐसा सपना कैसे देख सका। "यह सपना नहीं, सच है" रंगनाथ ने कहा। फिर असली बात सर्पानंद से यों बतायी।

एक बार रंगनाथ के यहाँ एक अतिथि आया था। वह रंगनाथ के अतिथि-सत्कार से बहुत ही तृप्त हुआ। उसने कहा "पुत्र, मैं तपोसंपन्न हूँ। मेरी प्रबल इच्छा है कि अपनी तपस्या का एक अंश किसी को समर्पित करूँ। अपनी तपोशक्ति का एक भाग किसी उत्तम मनुष्य को दूँ। आज वह उत्तम मनुष्य मिल गया। मेरी इच्छा साकार होने जा रही है। आज से हर दिन तुम्हारी एक इच्छा अवश्य पूरी होती रहेगी, चाहे वह कितनी ही असाध्य क्यों न लगे। तुम इस वर से असीम संपत्ति का वारिस बनकर सदा इसी प्रकार अतिथियों का आदर-सत्कार करते रहो और सुखी रहो।"

रंगनाथ तपस्वी की बातों से खुश न होते हुए कहने लगा "स्वामी, यह मेरा भाग्य है कि आप मेरे घर पधारे। आपका यह वर ख़तरनाक है। क्योंकि इच्छा मन से संबंधित है। मन को काबू में रखना कठिन है। इसलिए आपके दिये वर का दुरुपयोग करके बहुतों को शायद कष्ट पहुँचाऊँगा, उन्हें दुखी करूँगा। ऐसा वर तो आप जैसे इंद्रिय-निग्रही के ही योग्य है, मुझे जैसे साधारण मनुष्य के योग्य नहीं।" अतिथि तपस्वी ने कहा "तो क्या ऐसा वर दूँ, जिससे हर दिन तुम्हारे यहाँ सोने की सौ अशर्फ़ियों की वर्षा हो।"

"स्वामी, मुझे इतना सोना नहीं चाहिये।

मनुष्य को चाहिये कि वह जो भी पाये, स्वयं कृषि से पाये। उसी से अपना जीवन बिताये। मैं अतिथि का आदर-सत्कार करूँगा भी तो उसी कमाई से, जो मेरी कृषि के फलस्वरूप मुझे प्राप्त हुई। मुझे यह वर भी नहीं चाहिये।''

''तो क्या ऐसा वर दूँ, जो अतिथियों की इच्छाएँ पूरी करने की शक्ति रखता हो। जैसे सोना, रत्न, जवाहरात आदि'' अतिथि ने पूछा।

''स्वामी, तब तो वह मेरे परिश्रम के फलस्वरूप प्राप्त फल नहीं होगा न? अतः अतिथियों को संतृप्त करने की शक्ति मुझे दीजिये।'' रंगनाथ ने कहा।

''अतिथियों को संतृप्त करना हो तो धन, वस्तुएँ व वाहनों की आवश्यकता पड़ेगी। है न?'' अतिथि ने पूछा।

''अगर ऐसा ही करूँगा तो वे मेरे घर आतिथ्य पाने नहीं आयेंगे बल्कि दान लेने आयेंगे। मैं दानी बनना नहीं चाहता। मेरी तो यही इच्छा है कि दूर प्राँतों से जो मेरे यहाँ आयेंगे, उन्हें आश्रय दे सकूँ, उनका आदर-सत्कार कर सकूँ। मनुष्य की इच्छाओं का संबंध उसके मन से बंधा हुआ हैं। मन तृप्त हो तो मनुष्य में इच्छाएँ नहीं होतीं। मुझे ऐसी शक्ति दीजिये, जिससे अतिथि के मन को तृप्त कर सकूँ।'' रंगनाथ ने कहा।

अतिथि तपस्वी अब भली भांति समझ गया कि आख़िर रंगनाथ चाहता क्या है? उसने कहा ''उन्हीं को आतिथ्य देना, जो स्वयं तुम्हारे यहाँ चले आते हैं। दिन में केवल एक ही बार तुम्हारे अतिथि की असंपूर्ण इच्छाएँ रात की निद्रा में संपूर्ण होंगीं। इससे उसके मन को संपूर्ण तृप्ति प्राप्त होगी।'' उस दिन से रंगनाथ उसी प्रकार अपने अतिथियों का आदर-सत्कार करता रहा।

इन विवरणों को सुनने के बाद सर्पानंद की सारी शंकाएँ दूर हो गयीं। उसने जाना कि रंगनाथ अद्भुत शक्तियों का उपयोग कभी भी अपने लिए नहीं करता। वह अतिथि के शरीर को नहीं, बल्कि उसके मन को संतृप्त करने का प्रयत्न करता है। इसी कारण गोपाल ने रंगनाथ की बड़ी प्रशंसा की और सलाह भी दी कि एक बार स्वयं उनसे मिलकर आइये। अपना गाँव लौटने के बाद सर्पानंद ने अपनी पद्धतियाँ बदल लीं।

जंतु - स्वभाव

नारायण अभी-अभी काशी की यात्रा करके लौटा। गाँव के चौपाल पर जमे लोगों से अपनी यात्रा के अनुभव सुनाते हुए कहने लगा ''यात्रा में मेरी मुलाक़ात दो अपाहिजों से हुई। जहाँ मैं ठहरा था, वहाँ एक को मैंने खाना खिलाया और कुछ रुपये भी दिये। दूसरे अपाहिज की भी मैंने भरपूर मदद की।

जब मैं यात्रा से लौट रहा था, तब पहले मिला दूसरे अपाहिज से। मैंने देखा कि उसने एक आश्रम की स्थापना की और वह एक बड़े ही ऋषि के रूप में माला और कमंडल लिये बैठा हुआ है। उसने मुझे देखा किन्तु ऐसा नाटक किया, मानों उसने मुझे पहचाना ही नहीं। उसके शिष्य उसकी भरपूर प्रशंसा किये जा रहे थे, उसकी अद्‌भुत शक्तियों की महिमाएँ गाये जा रहे थे और लोगों से पैसे वसूल कर रहे थे।

यात्रा करते हुए मैं आगे बढ़ा तो एक जगह पर मैंने दूसरे अपाहिज को देखा। उसने तुरंत मुझे पहचान लिया। जहाँ मैं ठहरा था, वहाँ आया और मेरे छोटे-मोटे काम करता रहा। उसने मेरे प्रति भक्ति-श्रद्धा दिखायी। मेरी समझ में नहीं आता कि दोनों की व्यवहार-शैली इतनी भिन्न क्यों है?''

गाँव के मुखिये ने उसके संदेह को दूर करने के उद्देश्य से कहा ''नारायण, कुत्ते को खाना खिलाओ। वह तुम पर मक्खी भी मंडराने नहीं देगा। ऐसे ही तुम बिल्ली को दूध पिलाओ। वह तुमसे अपनी सेवाएँ करायेगी। कुत्ता खाना खिलानेवाले को भगवान से भी अधिक महत्वपूर्ण मानता है। किन्तु बिल्ली अपने आपको भगवान समझती है। काशी की यात्रा में जिस प्रथम अपाहिज से मिले, वह कुत्ते के समान है, तो द्वितीय अपाहिज बिल्ली के समान। दोनों ने अपना-अपना स्वभाव दिखाया। मनुष्य भी एक जंतु ही है, पर उसमें सोचने की शक्ति है, जिसने जंतुओं से उसे अलग किया है। हम में भी कुछ लोग कभी-कभी जंतुओं के स्वभाव दर्शाते रहते हैं।''

- आरती
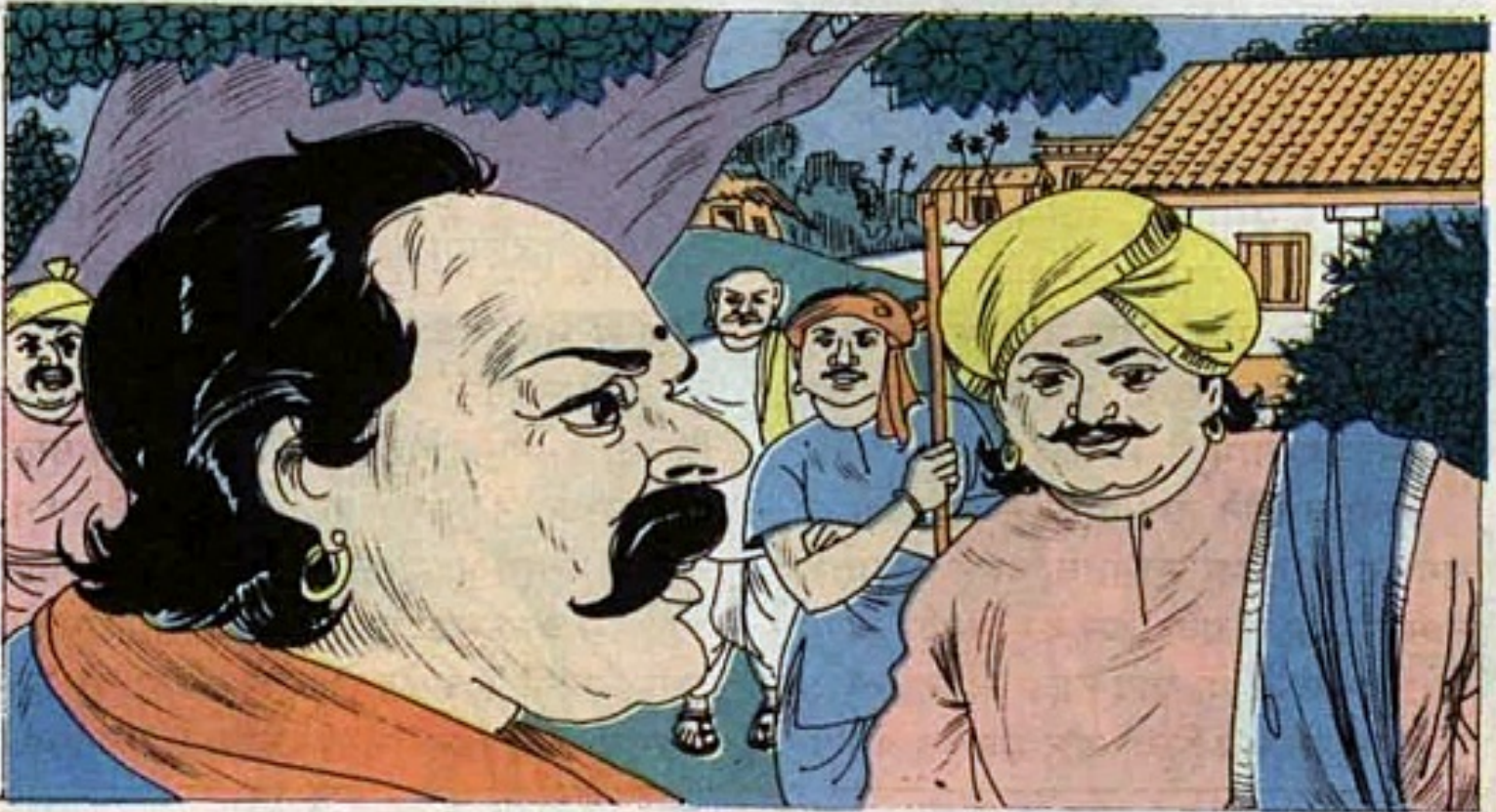
सम्राट अशोक

मगध साम्राज्य की राजधानी उद्यानवनों, फलवृक्षों से लबालब भरा हुआ अति सुँदर नगर था। नगर की प्रजा को प्रकृति से बड़ा ही लगाव था। इसीलिए उन्होने राजमार्गों व वीथियों के दोनों ओर छाया देनेवाले पुष्पों तथा फलवृक्षों को रोपा और पनपाया। नगर में जहाँ भी देखो, सुगंध पुष्प ही पुष्प थे। इन कुसुमों की बदौलत ही नगर के एक भाग का नाम रखा गया कुसुमपुर। यहाँ पाटल पुष्प अधिकाधिक फूलते थे, इसीलिए इस नगर का नाम पाटलीपुत्र पड़ा, जो सार्थक नाम है।

गंगा व सोने नदियों के संगम स्थल पर, लगभग दो हज़ार सालों के पहले अजातशत्रु नामक राजा ने एक क़िले का निर्माण किया। दो शताब्दियों के बाद राजा चंद्रगुप्त ने उस क़िले को विस्तृत किया और मज़बूत बनाया। तब उस अद्भुत किले में पाँच सौ सत्तर बुर्ज और चौंसठ द्वार थे।

नंदवंश के राजाओं ने मगध पर शासन चलाया। चंद्रगुप्त ने उनका विरोध किया। किशोर चंद्रगुप्त और उसकी माता का अपमान किया नंदवंशजों ने। नंदराजाओं ने सिपाहियों को आज्ञा भी दी कि चंद्रगुप्त पकड़ा जाए और उसे कड़ी से कड़ी सज़ा दी जाए। पर वह उनके हाथ नहीं आया। अपने को बचाकर नगर से भाग गया।

यह उन दिनों की बात है, जब कि विश्व विजेता बनने की आकांक्षा लेकर ग्रीक सम्राट अलेक्जांडर ने भारत पर आक्रमण किया। चंद्रगुप्त निर्भीक होकर उसके सम्मुख गया और उस आक्रमण का विरोध किया। उसकी हँसी उड़ायी। अलेक्जांडर ने आज्ञा दी कि चंद्रगुप्त क़ैद कर लिया जाए। घुड़सवार

सैनिकों से बचकर चंद्रगुप्त भाग निकला ।

ऐसा जोशीला व उद्दंड स्वभाव का चंद्रगुप्त कैसे मगध सिंहासन पर आसीन हो सका? जैसे अग्नि का साथ हवा दे तो जो परिणाम निकलता है, वैसा ही परिणाम निकला चंद्रगुप्त और चाणक्य के मिलाप से, एक-दूसरे की सहायता से । चाणक्य भी नंदवंशज धनवान के हाथों अपमानित हुआ । उसने शपथ ली कि नंदवंश का निर्मूलन करूँगा । उसका एकमात्र लक्ष्य भी यही था । इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए उसने अपना घर-बार छोड़ दिया । उसी दौरान नवयुवक चंद्रगुप्त से उसकी मुलाक़ात हुई । दोनों का लक्ष्य एक ही था - नंदवंश का निर्मूलन । चंद्रगुप्त के धैर्य-साहस को, चाणक्य के विद्या-विवेक ने मार्ग दिखाया । जंगल के बीचों बीच इन्होंने सेना का समीकरण किया और उन्हें युद्ध-विद्या का प्रशिक्षण दिया । अकस्मात् मगध राज्य पर हमला किया और जनता के विश्वास को खोये हुए धनानंद को राज्य से भगाकर सिंहासन को हस्तगत किया । चाणक्य प्रधान मंत्री बना और चंद्रगुप्त मगध का राजा । मगध राजभवन में चंद्रगुप्त की माता मुरा का घोर अपमान हुआ । उसने अपनी माता के नाम पर मौर्य वंश की स्थापना की । अपनी माता की प्रतिष्ठा का पुनरुद्धार किया ।

तब तक अलेक्जांडर मर चुका था । फिर भी पंजाब तक ग्रीक साम्राज्य विस्तरित था । चंद्रगुप्त अपनी सेना को ग्रीक साम्राज्य की सरहदों तक ले गया और चंद ग्रीक सामंतों को हराकर उनसे उनकी ज़मीनें छीन लीं । तब उस समय उन प्राँतों का शासन-भार संभाल रहा था, अलेक्जांडर का सेनापति सेल्यूकस । सेल्यूकस को जब समाचार मिला कि चंद्रगुप्त ने उसके प्राँतों पर हमला किया तो वह ग्रीक से लौटा और अपने खोये प्राँतों को पुनः प्राप्त करने के उद्देश्य से चंद्रगुप्त से लड़ाई की । मगध सेनाओं ने डटकर जब ग्रीक सेनाओं का सामना किया तो सेल्यूकस ने चंद्रगुप्त से संधि कर ली । साथ ही अपनी पुत्री एथीना का विवाह चंद्रगुप्त से कराया ।

इसके बाद चंद्रगुप्त ने माल्व, घूर्जर, सौराष्ट्र प्राँतों पर एक-एक करके अपना आधिपत्य जमाया । अपने राज्य की सीमाओं को विस्तरित किया । विवेकी व शक्तिशाली राजा के नाम से वह विख्यात हुआ ।

चंद्रगुप्त के बाद उसके पुत्र बिंदुसार मगध सिंहासन पर आसीन हुआ । कठोर परिश्रम

करके पिता की बढ़ायी संपत्ति व सुस्थिर रूप से स्थापित शांति की बड़ी ही दक्षता से रक्षा की बिंदुसार ने । मुख्य परगणों के प्रधान नगर बने तक्षशिला, उज्ञयिनी ।

बिंदुसार के शासन-काल में, राजधानी पाटलीपुत्र में एक दिन एक ब्राह्मण आया । उस ब्राह्मण के साथ एक सुंदर युवती भी थी । वह उसकी पुत्री थी । राजभवन के सिंहद्वार पर पहुँचने के बाद उस ब्राह्मण ने प्रहरियों से कहा कि मैं राजा का दर्शन करना चाहता हूँ ।

प्रहरियों ने ब्राह्मण को नख से शिख तक देखा और कहा ''आप किस राज्य के महाराजा हैं? यह महारानी कौन है? स्वयं राजा को ही क्या इनका स्वागत करना होगा?'' कहकर उसकी हँसी उड़ायी ।

ब्राह्मण ने सविनय कहा ''महाशयो, मैं ग्रामीण हूँ । महाराज से मुझे तुरंत मिलना है । दया करके मेरी सहायता कीजिये । अब मेरी सहायता करेंगे तो भविष्य में आपका शुभ होगा ।'' धीरे-धीरे उसने विनती की ।

ब्राह्मण की बातें सुनकर प्रहरी सोच में पड़ गये । उसके बग़ल में खड़ी युवती देखने में अति सुँदर व गंभीर है । प्रहरियों का सरदार ब्राह्मण के पास आया और पूछा कि आप महाराज से क्यों मिलना चाहते हैं ?

''यह अति रहस्य-भरी बात है । केवल महाराज को ही सुना सकता हूँ'' ब्राह्मण ने कहा ।

सरदार ने कहा ''राजा से क्यों मिलना चाहते हो, किस उद्देश्य से मिलना चाहते हो, यह राज़ राजा से मिलने के पहले मंत्री को बताना होगा ।''

ब्राह्मण कुछ बताने ही जा रहा था कि इतने में अंदर से घोड़े की टापों की ध्वनि सुनायी पड़ी । स्पष्ट है कि घोड़े पर बैठकर राजभवन से कोई आ रहा है ।

'हटो, हटो' कहकर चिल्लाने लगे प्रहरी। एक प्रहरी ने ब्राह्मण को पीछे ढकेल दिया । वह अपनी बेटी पर जा गिरा, जिससे वह युवती ज़मीन पर गिर गयी । तभी वहाँ आये हुए बिंदुसार ने अपने घोड़े की लगाम खींची और उसे आगे बढ़ने से रोक लिया । प्रहरियों ने राजा को प्रणाम किया । उनपर नाराज़ होते हुए राजा ने तब नीचे गिरे हुए ब्राह्मण व युवती को देखा । ब्राह्मण धीरे-धीरे उठा और काँपते हुए स्वर में कहा ''महाप्रभू, इसमें इन सिपाहियों की कोई ग़लती नहीं है ।
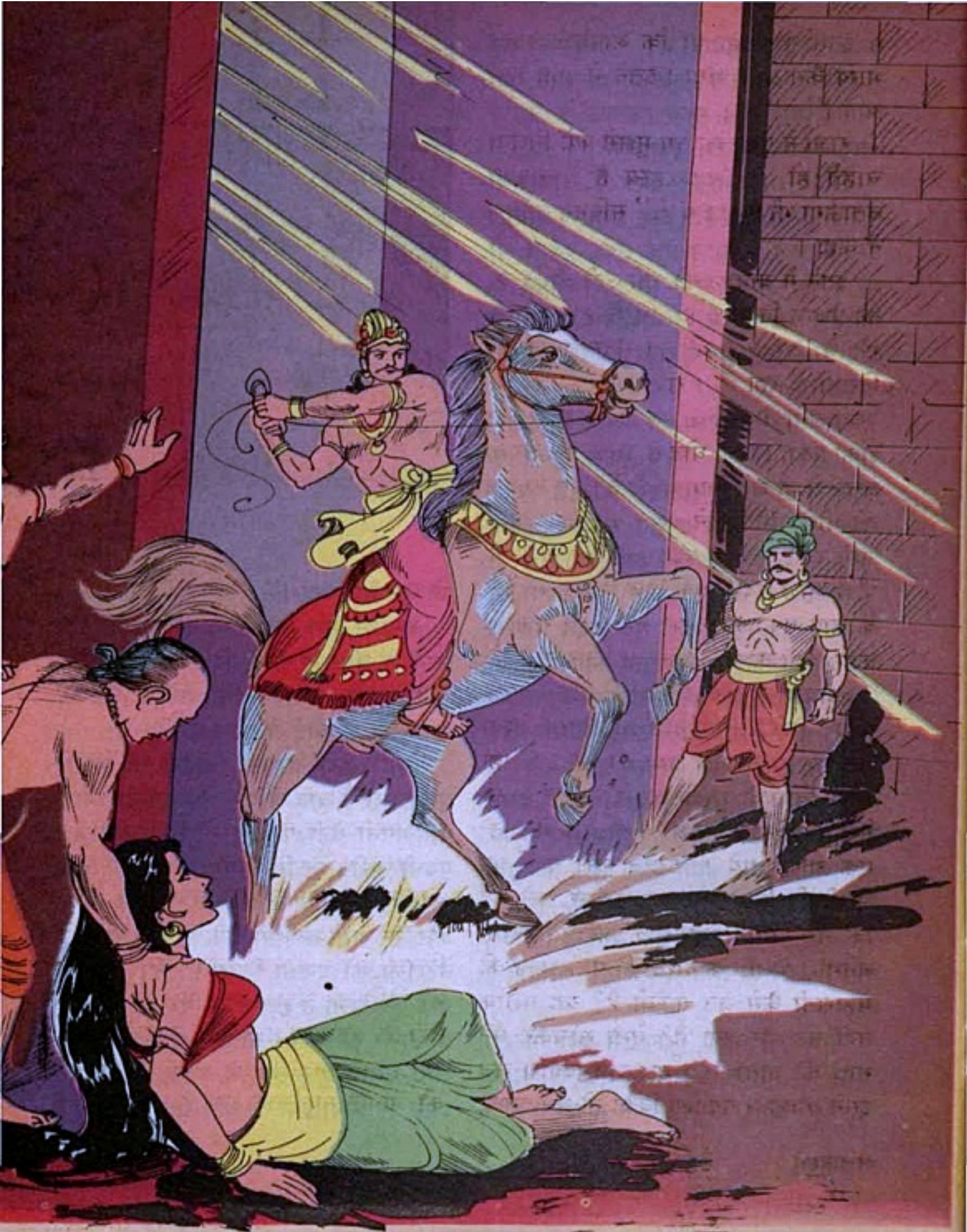
मैं इनसे पूछ रहा था कि आपका दर्शन-भाग्य कैसे प्राप्त होगा। इतने में आप यहाँ आये।"

राजा ने पूछा कि तुम मुझसे क्यों मिलना चाहते हो? "यह रहस्य है। आपको बताऊँगा भी एकांत में ही" सविनय ब्राह्मण ने कहा।

इतने में ब्राह्मण की पुत्री उठी और राजा को प्रणाम किया। केश बिखरे हुए थे, वस्त्र गंदे थे, पर वह बड़ी ही सुंदर व मनोहर दिखायी दे रही थी। राजा जब उसे एकटक देखने लगा तो शर्म के मारे उसने अपना सिर झुका लिया। राजा घोड़े से उतरा और लगाम बग़ल में ही खड़े सिपाही को देते हुए ब्राह्मण को पीछे-पीछे आने का संकेत देकर अंदर जाने लगा। पुत्री-सहित ब्राह्मण राजा के पीछे-पीछे गया। एक विशाल कक्ष में जाने के बाद एक आसन पर बैठते हुए राजा ने कहा "जो कहना चाहते हो, अब कहो।"

ब्राह्मण ने फिर से राजा को प्रणाम करके कहा "मेरी बातों में कोई अटपटापन अथवा अविवेक हो तो मुझे क्षमा कीजिये। मैं यहाँ केवल विधि के दूत के रूप में आया हूँ। जब मेरी पुत्री शैशव अवस्था में थी, तब मेरे यहाँ एक साधु आये। उन्होंने मेरी पुत्री को आशीर्वाद दिया और यह कहकर चले गये कि यह सयानी बनने के बाद महारानी बनेगी। भला एक दरिद्र की पुत्री राज्य की महारानी कैसे बन सकती है? यह मज़ाक नहीं तो और क्या है? ऐसा सोचकर मैंने साधु की बातों पर ध्यान नहीं दिया। जब इसने यौवन में पदार्पण किया तो मैंने इसका विवाह कराना चाहा। वर की खोज करने लगा। उस समय ज्योतिषियों ने जब इसकी जन्म-कुंडली देखी तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने निस्संकोच बताया कि यह युवती महारानी बनकर ही रहेगी।"

उन बातों को सुनकर राजा ने बड़े आश्चर्य से उस युवती को देखा। लज्जा के मारे सिर झुकाकर वह भूमि की ओर देखने लगी।

ब्राह्मण ने फिर कहना शुरु किया "महाराज, आप एकमात्र महाराजा हैं, जिन्हें मैं जानता हूँ। इसीलिए मैं यहाँ आया। मेरा विचार है कि आपके दर्शन-भाग्य के पीछे भी विधि का अदृश्य हस्त है। मुझे मालूम नहीं कि आप उस समय वहाँ न आते तो मेरी क्या हालत होती। अब अपनी पुत्री सुभद्रा को आपके सुपुर्द कर रहा हूँ। कृपा करके

स्वीकार कीजिये ।''

''मेरी कई रानियाँ हैं। मान लीजिये कि आपकी बातों के अनुसार मैं इस युवती से विवाह कर भी लूँ तो यह महारानी कैसे बन सकती है?'' राजा ने अपना संदेह व्यक्त किया।

ब्राह्मण ने कहा ''मैं और कुछ नहीं जानता। वही होगा, जो विधाता चाहता है।''

राजा ने मुस्कुराते हुए ब्राह्मण की पुत्री को देखा। सैनिक को भेजकर अंतःपुर की प्रधान परिचारिका को बुलवाया और उससे कहा ''जब तक मैं नहीं लौटता तब तक इस युवती की देखभाल सावधानी से करना। इसमें कोई क़सर रह न जाए।''

परिचारिका युवती के पास आयी। राजा राजभवन के बाहर चला गया। वहाँ से जाने के लिए तैयार पिता को आँसू-भरे नयनों से देखकर सुभद्रा ने पुकारा 'पिताश्री'।''

''मैंने अपना कर्तव्य निभाया पुत्री। अब मुझे यहाँ रहना नहीं चाहिये। पिता होने के नाते मेरा जो धर्म था, निभाया। अब मैं चलता हूँ'' ब्राह्मण ने कहा।

सुभद्रा ने दुख-भरे स्वर में कहा ''पिताश्री, मुझे छोड़कर मत जाइये।''

''ऐसी बातें मत करो सुभद्रा। पुत्री का घर मायका नहीं होता, बल्कि ससुराल होता है। माता-पिता का कर्तव्य है कि किसी सुयोग्य व्यक्ति से उसका विवाह रचाये। तब पुत्री परायी हो जाती है। पत्नी बनने के बाद उसका धर्म है कि वह अपने परिवार के गौरव में कोई आँच न आने दे। याद रखना, यहाँ तुम अकेली नहीं हो। विधि तुम्हारे संग है। यहाँ तुम्हें पहुँचाया विधि ने ही। सदा, सब स्थितियों में तुम्हारी रक्षा करता रहेगा। दुखी न होना'' कहकर ब्राह्मण ने उसे सांत्वना दी। एक बार अपनी पुत्री को हृदयपूर्वक देख लेने के बाद भवन से निकला। उसके पग आगे बढ़ नहीं रहे थे, पर विवश होकर वह वहाँ से चला गया।

पिता के जाने की दिशा को देखती हुई वह बिलखने लगी। तब परिचारिका सुभद्रा को धीरे से भवन के अंदर ले गयी।

सुभद्रा को देखते ही अंतःपुर में हंगामा मच गया। रानियों की दासियाँ एक-दूसरी से कानाफूसी करने लगीं।

''इसकी सुँदरता देखते हुए ऐसा नहीं लगता कि यह गाँव के एक दरिद्र ब्राह्मण की पुत्री है। ऐसा लगता है कि कोई राजकुमारी

छद्म वेष में आयी है।'' एक दासी ने कहा।

''महाराज इससे विवाह रचायेंगे तो अवश्य ही अन्य रानियों को भुला देंगे। इसमें कोई संदेह ही नहीं'' एक और दासी ने कहा।

तीनों रानियाँ इनकी बातें छिपकर सुन रही थीं। ईर्ष्या से वे जल उठीं और अपने-अपने कक्षों में चली गयीं।

प्रधान परिचारिका ने सुभद्रा को एक विशाल कक्ष दिखाया। भोजन का प्रबंध किया और पहनने के लिए नूतन वस्त्र लाकर दिया।

दूसरे दिन सबेरे-सबेरे ही बिंदुसार राजभवन से निकल पड़ा। राज्य के सरहदी प्राँतों में कुछ सामंतों ने बग़ावत की। उनका दमन करने वह सेना-सहित वहाँ गया। यह काम पूरा होते-होते दो महीने लग गये। राजा के लौटते तक प्रधान परिचारिका ने सुभद्रा के लिए आवश्यक सुविधाओं का प्रबंध किया। परंतु लौटने के बाद राजा ने सुभद्रा के बारे में कोई बात ही नहीं की। परिचारिका ने जान लिया कि राजा ने उसे बिल्कुल भुला दिया।

तीनों रानियों ने सोचा कि राजा अगर सुभद्रा से विवाह करेंगे तो उनके प्रति प्रेम घट जायेगा। सुभद्रा के प्रेम में डूबकर शायद वे उनकी परवाह ही न करें। इसलिए उन्होंने ऐसा उपाय सोचा, जिससे राजा, सुभद्रा को भूल ही जाएँ। मांत्रिकों को बुलवाकर उसपर मंत्र-तंत्रों का प्रयोग करवाने लगीं।

रानियों के प्रोत्साहन के बल पर प्रधान परिचारिका सुभद्रा का अपमान करने पर तुल गयी। उसे रानियों के नखों को काटने का काम सौंपा गया। रानियाँ बहाने बनाकर सुभद्रा

का अपमान करने लगीं। उसकी हँसी उड़ाने लगीं। कहने लगीं कि वह उनका काम सक्रम रूप से नहीं कर रही है। ताना देने लगीं ''तुम दरिद्र परिवार में जन्मी कन्या हो। एक ब्राह्मण स्त्री हो, फिर भी एक राजा से विवाह करने के सपने देख रही हो? तुम्हारे प्रयत्न निष्फल होंगे। अब भी कोई विलंब नहीं हुआ। चुपचाप राजभवन छोड़ दो और अपने पिता के पास चले जाओ। तुम्हीं ने जान लिया होगा कि राजा तुम्हें नहीं चाहते। इसी कारण युद्ध से वापस आने के बाद वे तुमसे मिले ही नहीं। तुम्हारा नाम भी नहीं लिया।'' सुभद्रा ने चुपचाप सब कुछ सह लिया। उसने अपने कष्टों को किसी से बताने का प्रयत्न भी नहीं किया। 'विधि तुम्हारे संग है' पिता की यह बात उसे अच्छी तरह से याद थी। इसलिये

उसने निर्णय कर लिया कि वह रानियों के लांछनों का कोई उत्तर नहीं देगी। चुप्पी साधेगी और विधि के निर्णय की प्रतीक्षा में रहेगी। समय गुज़रता गया पर उसने अपना मुँह सी रखा। यों दो साल गुज़र गये।

एक दिन जब राजा उद्यानवन में टहल रहा था तब पैर में एक कांटा चुभ गया। पास ही के एक आसन में बैठकर उसने ताली बजायी। एक सेवक दौड़ा-दौड़ा आया।

राजा ने कहा "पैर में कांटा चुभ गया है। नाई को बुला लाना।" ऐसे कामों में नाई सिद्धहस्त होते हैं। किन्तु उस समय राजभवन में ऐसा कोई नहीं मिला। सेवक ने सामने खड़ी सुभद्रा को देखा तो कहा "राजा के पैर में कांटा चुभ गया है। तुम जाकर निकालो।"

सुभद्रा घबराती हुई राजा के पास पहुँची। उसके पैरों के पास ज़मीन पर बैठ गयी और बड़ी ही आसानी से चुभे काँटे को निकाला।

राजा ने उससे कहा "लगता है तुम्हें इसके पहले राजभवन में कहीं देखा नहीं।" सुभद्रा ने कोई जवाब नहीं दिया। पर उसकी आँखों से अश्रुधारा बह रही थी।

राजा ने पूछा "यहाँ कब से रह रही हो?"

"प्रभु, उस दिन से, जिस दिन मेरे पिताश्री ने मुझे आपके सुपुर्द किया" उमड़ते हुए अपने दुख को संभालती हुई सुभद्रा ने कहा।

राजा ने उसे एक और बार ध्यान से देखा। उसके स्मृति-पटल पर अचानक वह घटना बिजली की तरह कौंधी। उस प्रधान परिचारिका पर पहले उसे बहुत क्रोध आया, जिसने आज तक याद ही नहीं दिलायी। फिर अपनी भूल पर, अपने आप पर बहुत क्रोध आया। थोड़ा शांत हो जाने के बाद उसने सुभद्रा से कहा "देरी जो हो गयी, सो हो गयी। तुम्हारे साथ जो अन्याय हुआ है, तुरंत उसका अंत करना होगा। अतः आज सूर्यास्त के पहले ही तुमसे विवाह करूँगा।"

राजा ने तुरंत मंत्रियों और पुरोहितों को बुलवाया। उन्हें विषय बताया और आज्ञा दी कि विवाह के लिए आवश्यक प्रबंध किये जाएँ।

(सशेष)

सुँद-उपसुँद

रात का समय है। अंधकार ही अंधकार है। जंतुओं की चिल्लाहटों से वातावरण और भयानक लग रहा है। सुनसान उस श्मशान में निर्भीक होकर विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया। फिर वह श्मशान की तरफ़ बढ़ा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "महाराज, मैंने बहुत कोशिश की, पर मेरी समझ में नहीं आया कि इतने कष्ट तुम क्यों झेल रहे हो? इसका मूल कारण क्या है? तुम तो जानते ही हो कि यह बड़ा ही विचित्र लोक है। केवल योग-विद्या धुरंधर ही नहीं, बल्कि जादू-टोना जाननेवाले, क्षुद्र शक्तियों पर काबू पानेवाले तांत्रिक भी कभी-कभी अपूर्व शक्तियाँ प्रदर्शित करते रहते हैं। उनकी सफलताओं को देखते हुए लगता है कि उनके लिए सब कुछ संभव है। किन्तु आश्चर्य तो यह है कि इनमें से कुछ व्यक्ति अपनी वैयक्तिक

बैताल कथा

समस्याओं का मार्ग ढूँढ पाने में असफल होते हैं और अपनी समस्याओं के परिष्कार के लिए किसी शक्तिशाली राजा के आश्रय में जाते रहते हैं। तुम्हें क्या यह विचित्र नहीं लगता? तुम्हारे विषय में भी मुझे ऐसी ही शंका हो रही है। कहीं ऐसा तो नहीं कि कोई योगी अथवा तांत्रिक अपनी समस्या के परिष्कार के लिए तुम्हारे आश्रय में आया हो और तुम उसकी इच्छा की पूर्ति में रत हो। उसकी समस्या का परिष्कार-मार्ग ढूँढ रहे हो। सच बताओ, क्या तुमने ऐसी जिम्मेदारी संभाली? ज़रूरत पड़ने पर योगी असहाय जनता की मदद करता है और तद्वारा मुक्ति पाने का उद्देश्य रखता है। किंतु तांत्रिक कीर्ति व अधिकार का लोभ देकर प्रजा को भ्रम में रखता है। उन्हें गुमराह करता है। सुंद नामक एक व्यक्ति की कहानी उदाहरणार्थ तुम्हें सुनाता हूँ। थकावट दूर करते हुए आराम से उसकी कहानी सुनो'' यों कहकर बेताल सुंद की कहानी सुनाने लगा।

बहुत पहले की बात है। मगध देश के धर्मपुरी नामक गाँव में सुंद और उपसुंद अड़ोस-पड़ोस में ही रहते थे। सुंद संपन्न था, पर उसका अपना कोई नहीं था। जितना हो सके, दूसरों की मदद करता रहता था। उसने गाँव में अच्छा नाम कमाया।

उपसुंद का व्यवहार उससे बिल्कुल भिन्न था। उसका परिवार बड़ा था। बुरी लतों की वजह से पैसा पानी की तरह बहाता था। सबसे झगड़ा मोल लेता था। अपना नुक़सान हो जाए, पर दूसरे का फ़ायदा न हो, यही उसकी नीयत थी। सोचने की उसकी पद्धति ही बड़ी टेढ़ी थी। दूसरे को हरा-भरा देख नहीं पाता था, इसीलिए गाँव के लोग उसे दुष्ट और ईर्ष्यालू कहा करते थे।

उपसुंद को मालूम था कि वह बदनाम है, पर इसे मानने के लिए वह तैयार नहीं कि उसके बुरे गुण इसके कारण हैं। वह हमेशा दूसरों से कहा करता था कि पड़ोसी सुंद की यह चाल है और उसी ने उसे बदनाम करने के लिए कमर कस ली। वह जान-बूझकर अपने को अच्छा आदमी साबित करने के लिए ही दान-धर्म कर रहा है।

''मेरा परिवार बड़ा है। इस वजह से मुझे कितनी ही क्लिष्ट समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं को मैं सुलझा नहीं पाता, इसलिए लाचार होकर मुझे कई व्यसनों का शिकार होना पड़ा। मेरा तो केवल

यही उद्देश्य है कि इन व्यसनों में डूबकर अपनी चिंताओं को, थोड़ी देर तक ही सही, भुलाऊँ। मैं भी दान देना चाहता हूँ। दीन-दुखियों की मदद करना चाहता हूँ, पर मेरे पास धन नहीं। सबके साथ अच्छा व्यवहार करना चाहता हूँ, उनसे दोस्ती बढ़ाना चाहता हूँ, परंतु मेरा मन हमेशा अशांत रहता है, आकुल रहता है, इसी कारण दूसरों से झगड़ा कर बैठता हूँ। मेरी इन कमज़ोरियों को सुँद भली-भांति जानता है। फिर भी वह मेरी सहायता करना नहीं चाहता। मैं चिंताओं से मुक्त हो जाऊँ तो अवश्य ही मैं अच्छा आदमी बनूँगा। पर मेरे अच्छे होने से सुँद को नुक़सान होगा।" यों एक बार उपसुँद ने ग्रामाधिकारी से बताया भी। ग्रामाधिकारी ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा "तुम्हारी अच्छाई से सुँद को कैसे नष्ट पहुँचेगा?"

"कोयले के पास ही पड़ी राख भी चाँदनी की तरह चमकती है। जहाँ कोई वृक्ष नहीं, वहाँ एरंडी का वृक्ष ही महावृक्ष माना जाता है। जहाँ पंडित नहीं, वहाँ अक्षरज्ञानी ही कालिदास है। आप ही बतायें, सुँद आखिर कौन-सी ऐसी अच्छाई कर रहा है? मैं उसका पड़ोसी हूँ, हर बात में उसकी तुलना मुझसे होती है, जिससे उसकी तारीफ़ के पुल बाँधे जाते हैं" उपसुँद ने ग्रामाधिकारी को बताया।

उपसुँद का यह तर्क ग्रामाधिकारी को सही लगा। यह बात गाँव भर में फैली। प्रचार भी हुआ कि सुँद, उपसुँद की बिल्कुल मदद नहीं कर रहा है और शत्रु-भाव से व्यवहार कर रहा है। सुँद के कानों में भी यह बात पड़ी।

सुँद तुरंत ग्रामाधिकारी के पास गया। उसने कहा कि गाँव के प्रमुख व उपसुँद बुलाये जाएँ। जब सब आये तब सुँद ने उपसुँद से पूछा "बताओ, तुम्हारी क्या कमाई है?" उपसुँद ने कहा कि महीने में सौ अशर्फ़ियाँ कमाता हूँ। "कहो कि महीने में कितना खर्च करते हो?" सुँद ने पूछा। उपसुँद ने कहा कि महीने में तीन सौ अशर्फ़ियाँ खर्च करता हूँ। सुँद ने पूछा कि कितना कर्ज़ है? उपसुँद ने कहा "दो हज़ार अशर्फ़ियाँ।"

तब सुँद ने ग्रामाधिकारी से कहा "महोदय, उपसुँद का क़र्ज़ चुका दूँगा। अपनी जायदाद से मुझे हर महीने हज़ार अशर्फ़ियों की कमाई होती है। वह आपके सुपुर्द करता हूँ। इसमें से पाँच सौ अशर्फ़ियाँ हर महीने उपसुँद को देते रहियेगा। परंतु मेरी कुछ शर्तें

हैं। इन्हें मानने पर ही इसे मुझसे सहायता मिलती रहेगी। आगे से उपसुंद व्यसन त्यजे, झगड़े न करे, अपने पास जो अदनी आमदनी है, उसका उपयोग परोपकार में हो।''

ग्रामाधिकारी ने सुंद की तारीफ़ की और कहा ''अपनी कमाई मुझे जो सौंपनेवाले हो, उसमें से पाँच सौ अशर्फ़ियाँ मैं उपसुंद को दे दूँगा। बाक़ी पाँच सौ अशर्फ़ियाँ मैं क्या करूँ?''

सुंद ने कहा ''अगर मैं पड़ोस में ही रहूँ तो उपसुंद से मेरी तुलना होगी। वह मेरी बराबरी करने की योग्यता नहीं रखता। इस वजह से उसे अच्छा नाम मिल नहीं पायेगा। मैं यहाँ रहकर इस भाग्य से उसे वंचित क्यों करूँ? मैं यह गाँव छोड़कर जा रहा हूँ। अलावा इसके, ऐहिक सुखों के प्रति मेरी कोई आसक्ति नहीं। अरण्य जाकर महर्षियों के आश्रय में रहकर ज्ञानार्जन करूँगा। मेरी शेष जायदाद को ग्रामवासियों की भलाई के लिए उपयोग में लाइये। मेरा यह निर्णय अटल है'' कहकर उसने वहीं आवश्यक दस्तावेज़ बनवाये और गाँव छोड़कर चला गया।

उपरांत सुंद जंगल में गया और एक महर्षि का आश्रय पाया। कुछ प्रश्न पूछने के बाद महर्षि ने कहा ''पुत्र, मेधावी मनष्य को चुनने चाहिये - केवल दो मार्ग। एक तपस्या करके मोक्ष-प्राप्ति। दूसरा - योग विद्या द्वारा ज्ञानार्जन। तुममें असीम ज्ञान की तृष्णा है। तुम योगी बनो और प्रजा का हित करो।''

तब मगध का शासन-भार संभाल रहा था, राजा महागुप्त। दो साल लगातार बारिश नहीं हुई, इसलिए राज्य में पानी व आहार की कमी पड़ गयी। इस साल भी बारिश होने के कोई आसार नहीं हैं, इसलिए राजा ने दुखी होकर मंत्रियों की बैठक बुलायी। सब खिन्न थे और किसी को कोई रास्ता सूझ नहीं रहा था।

उस स्थिति में सुंद वहाँ आया। राजा का दर्शन करके कहा ''महाराज, एक ऐसी समस्या आ खड़ी है, जिसका परिष्कार आप ही कर सकते है। अगर आपने यह काम किया तो मैं भरसक आपकी मदद करूँगा।''

वेष-भाषा व मुख तेजस्व को देखकर राजा को लगा कि ये कोई योगी होंगे। उसने सुंद से कहा ''महात्मा, आप अपनी समस्या बताइये। सुलझाऊँगा। मेरी समस्या को आप सुलझा नहीं सकते, इसलिए मुझे आपकी सहायता की आवश्यकता नहीं है।''

सुंद ने गंभीरता से कहा "लेन-देन मानव-धर्म है। अपनी समस्या का विवरण दीजिये। उसे ज़रूर मैं सुलझाऊँगा।" महागुप्त ने बताया कि राज्य में बारिश नहीं हो रही है।

सुंद ने हँसकर कहा "इस समस्या का हल मेरे बायें हाथ का खेल है। प्रकृति की शक्तियाँ कुछ सूत्रों पर आधारित हैं। वातावरण में अनुकूलता के अभाव के कारण हमारे देश में वर्षा नहीं हो रही है। कुछ मंत्रों का उच्चारण करने से वातावरण में वर्षा की अनुकूल स्थिति उत्पन्न होती है। बस, इसके लिए सही स्थल चाहिये।" महागुप्त ने चकित होते हुए कहा "मेरे राज्य में बारिश बरसायेंगे तो मैं आपका कनकाभिषेक करूँगा।"

सुंद ने उत्तर दिये बिना थोड़ी देर तक आँखें बंद कीं और फिर आँखें खोलकर कहा "रथ सन्नद्ध कीजिये। शिवपुत्र ग्राम शब्द यज्ञ के लिए अनुकूल प्रांत है।"

रथ सन्नद्ध हुआ। उस रथ में सुँद और महागुप्त बैठे थे। रथ चलाने के लिए सारथी भी था। सुँद के आदेश के अनुसार महाराज निरायुध था।

बहुत दूर जाने के बाद अचानक घोड़ों ने हिनहिनाया और रुक गये। सारथी ने घबराते हुए कहा "महाराज, बाघों का एक झुंड बीच रास्ते में रुकावट बनकर खड़ा है।"

सुँद और महाराज ने उस तरफ़ देखा। थोड़ी ही दूर पर कुल मिलाकर बारह बाघ थे। जलाशयों के सूख जाने के कारण पानी की तलाश में वे वहाँ आये होंगे। दो घोड़ों और तीन आदमियों को देखकर उनमें उत्साह भर आया। अपने साथ हथियार न लाने पर राजा को बड़ा दुख हुआ। पर वह ला भी कैसे सकता था? वह तो सुँद की शर्त थी, जो उसे पूरी करनी पड़ी।

सुँद रथ से उतरा और मंत्र जपते हुए बाघों

के पास आया। महागुप्त आँखें फाड़-फाड़कर देख रहा था कि यह क्या हो रहा है। बाघ एक के बाद एक आता रहा और उसके सामने घुटने टेककर फिर पास के जंगल में जाता रहा।

सुंद अब वापस आकर रथ में बैठ गया। फिर कहा "क्रूर जंतु कुछ सूत्रों का अनुसरण करके जीवन बिताते हैं। शब्दसमूह से उन्हें काबू में रखना योगी के लिए संभव है।"

थोड़ी देर बाद रथ शिवपुत्र गाँव में पहुँचा। उस समय उन्होंने देखा कि गाँव की सरहद पर कुछ ग्रामीण परेशान घूम रहे हैं। सुंद ने उनसे पूछा कि बात क्या है?

एक वृद्ध ने सुंद को आश्चर्य से देखते हुए पूछा "कहीं तुम योगी तो नहीं हो?"

सुंद ने कहा कि मैं योगी हूँ।

तब उस वृद्ध ने कहा "हमारी ग्राम देवी ग्रामाधिकारी के सपने में आयी और उससे बताया कि एक योगी तुम्हारे गाँव आनेवाले हैं। शब्दयज्ञ करके बारिश बरसानेवाले हैं। देवी ने यह भी बताया कि शब्दयज्ञ से बारिश अवश्य होगी पर तुम्हारे गाँव में भूकंप आयेगा। अगर गाँव को भूकंप से बचाना हो तो एक ही मार्ग है और वह है, उस पथ्थर को छे फुट ऊँचा उठाना होगा, जो बरगद के तने के पास पड़ा हुआ है। गाँववासी इसी प्रयत्न में लगे हुए हैं। वह पथ्थर एक अंगुल भी हट नहीं रहा है।"

महागुप्त उस पथ्थर के पास गया। वह आकार में बड़ा और भारी दिख रहा था। महाबलशाली शायद एक अंगुल हटा पाये पर छे फुटों तक उठाना असंभव है।

राजा सोचने लगा कि क्या करूँ, तब सुंद पास आया और कहा "महाराज, सब काम बल मात्र से नहीं होते। ज्ञान-शक्ति का उपयोग किया जाए तो पहाड़ों को भी पीस सकते हैं। अणु से ब्रह्मांड की सृष्टि की जा सकती है। अपनी ज्ञान-शक्ति से मैं उस पथ्थर को ऊपर उठाऊँगा।" कहते हुए उसने कुछ मंत्र पढ़े।

दूसरे ही क्षण वह पथ्थर हवा में उड़ा। ठीक छे फुट की ऊँचाई पर जाकर वहीं रुक गया। सभी ग्रामीणों ने हर्ष-ध्वनियाँ कीं।

इसके बाद सुंद ने शब्दयज्ञ किया। यज्ञ की पूर्ति के साथ-साथ आकाश में मंडराते हुए काले-काले बादल दिखायी पड़े। बादल फैलते गये और ठंडी हवा चलने लगी। पानी बरसने लगा। वह केवल शिवपुत्र गाँव तक

ही सीमित नहीं था, बल्कि पूरे मगध देश में व्याप्त था। इतना बरसा, इतना बरसा कि मगध के नागरिकों के मन उल्लास से भर गये।

यह सब कुछ देखते हुए घबराये हुए महाराज महागुप्त ने सुंद से कहा "महानुभाव, आप सर्वशक्ति संपन्न हैं। अवतार पुरुष की तरह मेरे देश में आपने क़दम रखा। मेरे देशवासियों के कष्टों को दूर भगाया। मैं तो सामान्य व्यक्ति हूँ। जो समस्या आपसे सुलझायी नहीं जा सकती, भला वह मेरे लिए कैसे संभव होगी? यही चिंता अब मुझे खाये जा रही है।"

सुंद ने मुस्कुराते हुए उपसुंद की कथा सुनायी और कहा "उसने अब भी मुझे छोड़ा नहीं। उसे मालूम हो चुका है कि मैं योगी बना हूँ और मेरे पास अद्भुत शक्तियाँ हैं। मेरे आश्रम में आकर हठ कर रहा है कि मैं उसे योग-विद्या सिखाऊँ। योग-विद्या से संबंधित कितने ही रहस्यों से भरे तालपत्रों को मैंने आश्रम में छिपा रखा है। मुझे और बहुत-से रहस्य जानने भी हैं। मैं चाहता हूँ कि उपसुंद मुझे तंग न करे, मेरे आश्रम की सुरक्षा का प्रबंध हो, इसी कार्य पर मैं आपके पास आया हूँ।"

महागुप्त को बहुत ही आश्चर्य हुआ और उसने कहा "आप क्रूर मृगों को काबू में रख सकते हैं; उनपर अपना अधिकार जता सकते है; भारी पथ्थरों को हवा में उड़ा सकते हैं; प्रकृति की शक्तियों को प्रेरित कर सकते हैं; परंतु क्या एक साधारण मनुष्य से बचने के लिए आप मेरी सहायता चाहते है? मुझसे अपनी सुरक्षा की सहायता मांग रहे हैं?"

उत्तर दिये बिना सुंद दो-तीन क्षण मौन रहा और फिर राजा की ओर देखते हुए गंभीर स्वर में कहा "राजन्, जब देश की तथा

उसके नागरिकों की सुरक्षा की जिम्मेदारी राजा पर है, दुष्टों और पापियों को सज़ा देने का भार राजा पर है, तब उन्हें स्वयं दंड देना अपने हदों को पार करना है। दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप करना मुझे संगत नहीं लगता।''

महागुप्त ने यह सुनकर अपने मुँह से एक शब्द भी नहीं निकाला। अरण्य में स्थित सुँद के आश्रम की रक्षा का प्रबंध बड़ी मुस्तैदी से किया। आज्ञा-पत्र भी निकलवाया कि उपसुँद उन प्राँतों में क़दम न रखे।

बेताल ने यह कहानी सुनायी और कहा ''राजन, सुँद ने मंत्र पढ़कर बाघों को भगाया, पथ्थर को हवा में उठाया, शब्दयज्ञ करके वर्षा बरसायी। मानता हूँ कि ये सभी कार्य वे ही कर सकते हैं, जिनमें योगशक्तियाँ भरी पड़ी हों। मैं इससे इनकार नहीं करता, पर मुझे एक संदेह है। ऐसी अपूर्व शक्तियाँ रखनेवाला एक असाधारण योगी एक साधारण मानव से अपने को बचाने के लिए राजा की सहायता मांग रहा है, क्या तुमको यह विचित्र नहीं लगता? इतना उत्तम योगी होते हुए भी उस मामूली आदमी को सजा दे नहीं पाया, क्या यह हास्यास्पद नहीं लगता? सुँद ने जो-जो तांत्रिक महिमाएँ दिखायीं, क्या वे सब क्षुद्र शक्तियाँ मात्र नहीं हैं? मेरे सवालों के जवाब जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारा सिर फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने उत्तर दिया ''भगवान ने मनुष्य को बुद्धि, सोचने की शक्ति, बोलने की कला प्रदान की। वह कुछ सूत्रों पर आधारित होकर काम करे तो सन्मार्गी बनता है। दुष्ट का व्यवहार किसी भी सूत्र पर आधारित नहीं होता। ज्ञान, विज्ञान, योग-विद्या का ऐसे लोगों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

सुँद अपनी योग-विद्या से उपसुँद को शायद सज़ा दे सके, परंतु उसकी बुद्धि को बदल नहीं सकता। अलावा इसके, जो योगी है, उसे किसी भी स्थिति में, अपने स्वार्थ के लिए किसी दूसरे को कष्ट पहुँचाना नहीं चाहिये। योग-ज्ञान का उपयोग वैयक्तिक विषयों में होना नहीं चाहिये। ऐसा करने पर योग-शक्तियों को खो देने की संभावना है। इसी कारण सुँद ने राजा की सहायता मांगी।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित ग़ायब हो गया और पेड़ पर चढ़ बैठा।

आधार : शरत राठौड की रचना

समुद्रतट की यात्रा - १५

मन्नार की खाड़ी और उससे आगे

आलेख : मीरा नायर ◆ चित्र : गोपकुमार

कन्या कुमारी से तट के साथ-साथ नाव में आगे बढ़ते हुए हम *मन्नार की खाड़ी* में प्रवेश करते हैं.

इस खाड़ी के द्वार पर ही मुख्यभूमि पर बसा हुआ है तटवर्ती शहर तिरुचेंदूर. यहां का भगवान सुब्रह्मण्य या मुरुग का मंदिर प्रसिद्ध है और उसका द्वार समुद्र की ओर खुलता है. मूल मंदिर हजार साल पहले बना था. लगभग तीन सदी पहले नया विशाल मंदिर बनाया गया, जिसका गोपुर नौ मंजिल का है. दूर-दूर से भक्त यहां आते हैं और कावरों में चढ़ावा लाते हैं. कावर को तमिल में 'कावडि' कहते हैं.

तिरुचेंदूर से चंद किलोमीटर की दूरी पर है तूतुकुडि अथवा ट्यूटिकोरिन. १९७४ में इसे भारत का दसवां बड़ा बंदरगाह घोषित किया गया. इस तरह तमिलनाडु देश का एकमात्र राज्य है, जिसमें दो बड़े बंदरगाह हैं. यहां का नौकास्थल मनुष्यनिर्मित है और सभी मौसमों में काम में आता है. इसके उत्तर और दक्षिण में दो बड़ी समुद्री दीवारें हैं, जो लहरों से बंदरगाह की रक्षा करती हैं. ४,०९६ मीटर लंबी उत्तरी दीवार दुनिया की दूसरे नंबर की सबसे लंबी समुद्री दीवार है.

भारतीय मोतियों की शोहरत पुराने जमाने से रही है. २ री सदी ई. में हमारे देश से रोम आदि देशों को मोती निर्यात होते थे. आज भी ट्यूटिकोरिन मोतियों के व्यापार का केंद्र है. यों अब उसकी ख्याति नमक, उर्वरक, भारी पानी और तापऊर्जा के कारखानों के कारण है.

भगवान सुब्रह्मण्य का मंदिर

पवित्र रामेश्वरम् द्वीप मन्नार की खाड़ी के उत्तरी छोर पर है. रामेश्वरम् हिंदुओं के चार पवित्र धामों में से एक है. (द्वारका, बदरीनाथ और जगन्नाथ पुरी बाकी तीन धाम हैं.) प्रत्येक निष्ठावान हिंदू की यह कामना होती है कि जीवन में एक बार रामेश्वरम् के दर्शन कर ले. इस टापू का संबंध रामायण की घटनाओं से है. हिंदू मान्यता के अनुसार, श्रीराम ने यहां पर शिवलिंग की स्थापना की, क्योंकि वे रावण के वध का प्रायश्चित्त करना चाहते थे, जोकि जन्म से ब्राह्मण था.

कथा है कि श्रीराम ने हनुमान को कैलास से शिवलिंग लाने का आदेश दिया. हनुमान ने तुरंत छलांग मारी. किंतु उन्हें वापस आने में बहुत देर लग गयी. इधर लिंग स्थापित करने का मुहूर्त निकला जा रहा था. अंत में सीताजी ने रेत से एक शिवलिंग बनाया और उसे स्थापित कर दिया गया.

थोड़ी देर बाद जब हनुमान कैलास से शिवलिंग ले कर लौटे तो यह देखकर विचलित हुए कि यहां दूसरा लिंग स्थापित किया जा चुका है. श्रीराम उनसे बोले कि तुम यह लिंग हटा दो, हम इसकी जगह तुम्हारा लाया हुआ लिंग स्थापित कर देंगे. हनुमान ने बहुत कोशिश की, लेकिन रेत का वह लिंग टस से मस नहीं हुआ. तब श्रीराम ने हनुमान से कहा कि कोई बात नही, कैलास से लाये शिवलिंग को हमारे शिवलिंग की बगल में स्थापित कर दो; पहले तुम्हारे शिवलिंग की पूजा की जाया करेगी, बाद में हमारे शिवलिंग की. हनुमान का शिवलिंग 'काशी विश्वनाथ रामस्वामी लिंग' कहलाता है और आज भी उसकी पूजा पहले होती है और बाद में 'रामलिंग' की. तो यह है रामेश्वरम् की कथा.

१५ वी सदी ई. में रामनाड के सेतुपति वंश के राजा उदयन ने रामेश्वरम् का वर्तमान मंदिर बनवाया. मान्यता है कि यह ठीक उसी

शिवलिंग को हिलाने का यत्न करते हुए हनुमान

रामेश्वरम् का मंदिर

जगह पर है जहां श्रीराम ने शिवलिंग स्थापित किया था. इस मंदिर में १,२०० मीटर लंबा एक गलियारा है, जिसमें पत्थर के १,००० खंभे हैं. इन पर बड़ी सुंदर नक्काशी की गयी है. भारत में इतना लंबा गलियारा दूसरा नहीं है. हिंदुओं के अलावा सिक्ख भी रामेश्वरम् को पवित्र मानते हैं, क्योंकि दसवें गुरु श्री गुरु गोविंद सिंह जी यहां पधारे थे.

तीर्थस्थान होने के अलावा रामेश्वरम् वैज्ञानिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है. रामेश्वरम् टापू के चारों ओर जो मूंगे की चट्टानें हैं, उनमें तरह-तरह के समुद्री जीवों का बसेरा है. उनका अध्ययन करने जीवविज्ञानी यहां आया करते हैं.

सुदीर्घ गलियारा

रामेश्वरम् के दक्षिणी छोर पर धनुष्कोडि है, जहां से श्रीलंका तनिक ही दूर है.

धनुष्कोडि (धनुष्कोटि) का मतलब है — राम का धनुष. यहां का तट धनुष की तरह मुड़ा हुआ है. यहां कोदंड रामस्वामी का मंदिर है, जिसमें श्रीराम, सीता, लक्ष्मण, हनुमान और विभीषण की मूर्तियां हैं. माना जाता है कि रावण का भाई विभीषण यहीं पर श्रीराम की शरण में आया था.

रामेश्वरम् द्वीप के निकट ही समुद्र में रेत के ढूहों की एक कतार है, जिसे *ऐडम्स ब्रिज* कहते हैं. हिंदू मानते हैं कि लंका पहुंचने के लिए श्रीराम ने जो पुल बनवाया था, ये उसके अवशेष हैं. भूविज्ञानी बताते हैं कि ये ढूह इस बात का प्रमाण हैं कि पहले भारत और श्रीलंका परस्पर जुड़े हुए थे. ३० कि.मी. लंबी यह कतार जहाजों के आवागमन में बहुत बड़ी बाधा है.

धनुष्कोडि के रेत के ढूह. स्पिनिफेक्स नाम की घास रेत को बिखर जाने से रोकती है. इस घास के तमिल नाम का अर्थ है — रावण के गलमुच्छे.

महर्षि अगस्त्य को दर्शन देते हुए शिव-पार्वती

रामेश्वरम् से हम पाक खाड़ी में से हो कर पाक जलपट्टी (जलडमरूमध्य) को पार करके अंत में बंगाल की खाड़ी में प्रवेश करते हैं. यहां पर जब हम कोडिक्करै (पाइंट कैलिमियर) पहुंचते हैं तो हंसावर (फ्लेमिंगो) पक्षी मानो हमारे स्वागत में पंख फड़फड़ाते हुए उड़ने लगते हैं. यहां के पक्षी-अभयारण्य में नाना प्रकार के पक्षी देखे जा सकते हैं.

कोडिक्करै के समीप ही समुद्रतट पर बसा *वेदारण्यम्* कस्बा हमारी आजादी की लड़ाई से जुड़ा हुआ है. यहां पर राजाजी (चक्रवर्ती राजगोपालचारी) ने नमक सत्याग्रह का नेतृत्व किया था. बाद में राजाजी स्वतंत्र भारत के गवर्नर जनरल बने.

वेदारण्यम् का शिवमंदिर भी प्रसिद्ध है. यहां शिव-पार्वती की मूर्तियां वर-वधू के वेश में हैं. मान्यता है कि महर्षि अगस्त्य की प्रार्थना पर शिव-पार्वती यहां उसी वेश-भूषा में प्रकट हुए, जो वेश-भूषा उन्होंने कैलास पर्वत पर अपने विवाह के समय धारण की थी. इसलिए वेदारण्यम् को 'दक्षिण कैलास' भी कहा जाता है.

कोडिक्करै
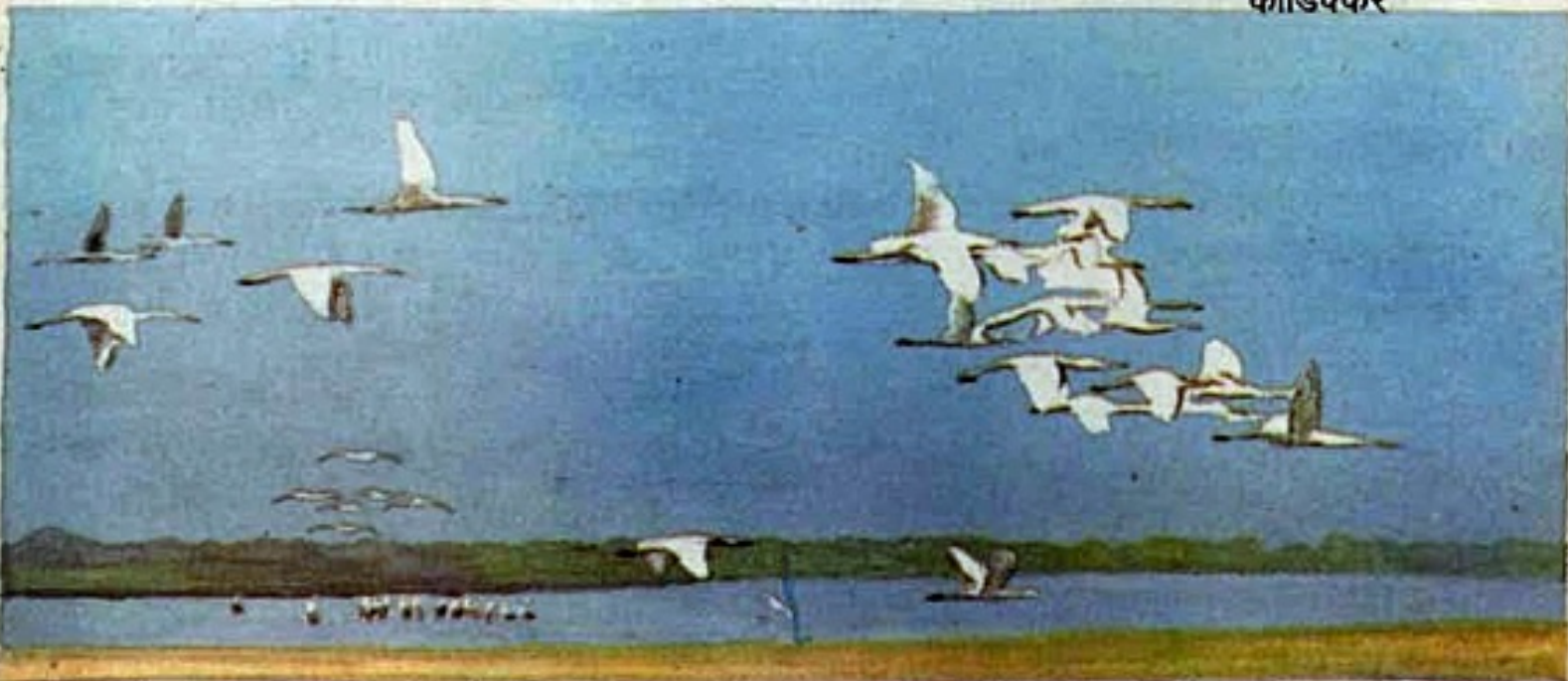
राक्षस की शपथ

चंद्रशिला राज्य का राजा विक्रमसेन भोगी व विलासी था । अपने शारीरिक सुखों के लिए साधन जुटाने में ही उसका अधिकाधिक समय व्यतीत होता था । अंतःपुर से वह कदाचित बाहर निकलता था । प्रजा के प्रति उसका व्यवहार बहुत ही उदासीन था । शासन-संबंधी कार्यों में उसकी कोई रुचि नहीं थी । इस कारण शासन का भार मंत्री ही संभालते थे । सहज ही, आश्रितों का पक्षपात तथा घूसखोरी सीमाएँ पार कर गयीं ।

उस राज्य में सिंहबल नामक एक युवक था । उसका अपना कोई नहीं था । फिर भी अनेकों कष्ट झेलकर शिक्षा पायी। सेना में भर्ती होने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण भी पाया ।

नौकरी के लिए राजधानी गया और महाराज से मिलना चाहा । किन्तु वहाँ उसे नौकरी नहीं मिली । क्योंकि मंत्रियों को घूस देने पर ही उसे नौकरी मिल सकती थी, इसलिए वह उनकी इच्छा पूरी नहीं कर पाया ।

दुखी सिंहबल को मंत्रियों और राजाओं पर क्रोध आया । उनके प्रति उसमें घृणा उत्पन्न हुई । वह कोई और नौकरी ढूँढ़ना नहीं चाहता था । उसने सोचा "ऐसे राज्य में क्यों रहूँ, जहाँ राजा और मंत्री अपने कर्तव्य भूल गये, जहाँ नागरिकों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को भुलाकर ऐश कर रहे हैं । प्रजा का रक्त चूस रहे हैं । भगवान का दिया शाप कहकर, जहाँ दरिद्रों की अवहेलना की जा रही है ।" उसने निश्चय किया कि शिकारी बनूँगा और जीविका चलाऊँगा । धनुष-बाण लिये और राज्य की सरहदी प्रांतों में फैले दंडकारण्य में प्रवेश किया । जंतुओं का शिकार करके वह अपना पेट भरने लगा ।

यों कुछ साल गुजर गये । विक्रमसेन अस्वस्थ हो गया । राजवैद्यों ने परीक्षा की

करुणा मल्होत्रा

अरण्य है। एक बार युवराज अग्निसेन उन प्रांतों में शिकार करने गया और वहाँ के क्रूर मृगों तथा विषैले सर्पों से किसी तरह बच निकला। उस समय उसने जंगली आदमियों से सुना था कि इस अरण्य में सिंहबल नामक एक मानव है।

अग्निसेन ने सैनिकों को भेजा और सिंहबल को बुलवाया। अग्निसेन के बारे में तब तक वह सुन चुका था। पिता भोगी व विलासी है तो बेटा बड़ा ही क्रूर है, जिसे अपनी जनता की कोई परवाह नहीं। पुत्र के भविष्य-निर्माण में पिता का पात्र बहुत ही मुख्य है। जब पिता ही अपनी बलहीनताओं के कारण अकर्मण्य हो जाए तो भला बेटा कैसे सही मार्ग पर चल पायेगा?

और बहुत-सी दवाएँ दीं। पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। तब रत्नाकर नामक एक वृद्ध वैद्य ने राजा की परीक्षा करने के बाद कहा "महाराज, अमृतवल्ली नामक अरण्य की जड़ी- बूटी से इस रोग की चिकित्सा हो सकती है। किन्तु इस जड़ी-बूटी को पाना मुश्किल का काम है।"

वहीं खड़े विक्रमसेन के बेटे अग्निसेन ने वृद्ध वैद्य से कहा "बताइये कि वह जड़ी-बूटी कैसी होती है और कहाँ मिलती है?"

रत्नाकर ने उस अमृतवल्ली का वर्णन किया और बताया कि वह कैसी होती है। उसने यह भी बताया कि दंडकारण्य के पूर्वी भाग के पहाड़ों में उपलब्ध होगी।

चंद्रशिला राज्य के सब नागरिकों को मालूम है कि दंडकारण्य कितना भयंकर

अग्निसेन ने, सिंहबल का आदर किया और कहा "सिंहबल, तुमने तो सुना ही होगा कि महाराज बहुत ही बीमार हैं। वैद्य ने कहा कि अमृतवल्ली नामक जड़ी-बूटी से उनकी चिकित्सा हो सकती है। इसे पाने में मुझे तुम्हारी सहायता चाहिये। जितना धन तुम्हें चाहिये, देने तैयार हूँ।" फिर उसने वैद्य के बताये सारे विवरण बताये। आज उसे सिंहबल की मदद की ज़रूरत है, इसलिए उसने उससे बड़ा मीठा व्यवहार किया। अगर उसे उसकी मदद की ज़रूरत न होती तो उसका मुख भी न देखता। उसे जंगली कहकर दूर भगाता।

सिंहबल ने कहा "युवराज, धन की बात न कीजियेगा। मेरी दृष्टि में परोपकार ही सबसे बड़ी संपदा है। मैं अवश्य आपकी मदद करूँगा।"

दूसरे दिन दोनों अश्वों पर आरूढ़ होकर

जंगल में पहुँचे। चार दिनों की यात्रा के बाद एक दिन की शाम को वे वैद्य के बताये हुए पूर्वी पर्वत-प्रांत में पहुँचे।

सिंहबल ने उत्साह-भरे स्वर में कहा "युवराज, वैद्य के बताये स्थल पर हम आ पहुँचे। उनके वर्णन के अनुसार अमृतवल्ली पौधा एक फुट से अधिक नहीं होगा। घोड़ों पर बैठकर हम उसे खोज निकाल नहीं सकते। हम पैदल चलेंगे और ढूँढेगें।"

दोनों घोड़ों से उतरे। अमृतवल्ली की खोज में लग गये। वहाँ उन्होंने जाना कि पास ही की पहाड़ी गुफ़ा में रक्ततर्पण नामक एक राक्षस है।

यह रक्ततर्पण राक्षसों में अति उत्तम जाति का था। उसके पूर्वज दंडकारण्य के अधिपति थे। निचली जाति के राक्षसों की तरह किसी जंतु को मारकर खाना वह अपना अपमान समझता था। उसने शपथ ली थी कि मरने के पहले किसी दिन एक मनुष्य को मारकर खाऊँगा।

अब उसे एक नहीं, दो मनुष्य दिखायी पड़े। वह आनंद से चिल्ला उठा और उनकी तरफ़ दौड़ते हुए आने लगा। उसका चीत्कार सुनते ही युवराज अग्निसेन और सिंहबल भय से काँप उठे। युवराज भयभीत होते हुए बोला "सिंहबल, अब मार्ग क्या है ? मेरा तो संदेह है कि उस वृद्ध वैद्य ने जान-बूझकर हमें राक्षस का शिकार बनाने यहाँ भेजा। हमारी मृत्यु निश्चित लगती है। अब हमें भगवान ही बचा सकता है।"

सिंहबल ने कहा "युवराज, राज्य के सब लोगों को अच्छी तरह मालूम है कि आपके

पिता भोग लालसी हैं, और आप हैं क्रूर। मैंने सुना था कि यह राक्षस आप ही की तरह अत्यंत क्रूर है। इस हालत में हम कर भी क्या सकते हैं? भगवान पर भरोसा करेंगे। पर चुप बैठने का समय नहीं है। म्यान से तलवार खींचिये।" कहते हुए सिंहबल ने धनुष में चढ़ाने के लिए बाण लिया।

इतने में राक्षस बिल्कुल उनके पास आ गया और दोनों को दोनों हाथों में लेते हुए कहा "आहा, आज मेरी शपथ पूरी होगी। किन्तु एक धर्म-संदेह है। मरने के पहले मैंने एक ही मनुष्य को मारकर खाने की शपथ ली थी। पर अब यहाँ दो हैं। क्या करूँ?" कहकर वह दोनों की ओर घूर-घूरकर देखने लगा।

तब सिंहबल ने कहा "राक्षसोत्तम, मुझे

इस बात का आनंद है कि तुममें धर्म-अधर्म को पहचानने का विवेक है। जीवन और मृत्यु के बीच लटकते हुए चंद्रशिला राज्य के राजा की चिकित्सा के लिए अमृतवल्ली नामक जड़ी-बूटी को खोजते हुए हम दोनों यहाँ आये। ये उस राज्य के युवराज हैं। तुम अगर बताओगे कि वह पौधा कहाँ है, तो उसे लेकर युवराज चले जाएँगे, तब मुझे तुम आराम से खा सकते हो। तुम्हारी शपथ में कोई विघ्न नहीं होगा।''

राक्षस ने दोनों को तुरंत ज़मीन पर रख दिया और सिंहबल से कहा ''वह पौधा इसी प्रांत में है। दूँगा, जरूर दूँगा। किन्तु मेरा एक और संदेह है। यह तो स्वाभाविक है कि संसार में जन्म देनेवालों के लिए उनकी संतान त्याग करती है। पर तुम्हीं बताओ कि क्या यह न्याय-संगत है कि यह युवराज तुम जैसे साधारण नागरिक की बलि दे और अपनी रक्षा कर ले।''

दूसरे ही क्षण अग्निसेन ने राक्षस के दोनों पैर पकड़ लिये और कहने लगा ''ऐ भले राक्षस, तुमने मेरी आँखें खोल दीं। मेरे राज्य की जनता मेरे पिता की भोग-लालसा पर उनसे घृणा कर रही है। मेरी क्रूरता पर मुझसे द्वेष कर रही है। इस सत्य को जानते हुए भी मुझे इस बात का गर्व था कि मैं सामान्य जनता के विश्वासों, धर्म-अधर्मों से परे हूँ। मेरी भूल पर मुझे दंड मिलना ही चाहिये। अमृतवल्ली पौधा सिंहबल को दो और मुझे खा जाओ।''

यह सुनते ही राक्षस ठठाकर हँस पड़ा और कहा ''जिस दया, करुणा आदि सात्विक गुणों की बात कर रहे हो, वे राक्षस स्वभाव के बिल्कुल विरुद्ध हैं। उनका पालन भी नहीं हो सकता। किन्तु तुम्हारे लिए अपने इस स्वभाव को भी त्यज रहा हूँ। मेरे साथ, आओ'' कहकर वह उन्हें कुछ दूर तक ले गया। वहाँ की झाड़ियों में से अमृतवल्ली पौधों को जड़-सहित उखाड़ा और उन्हें देते हुए कहा ''एक नहीं, दो ले जाइये। पर मेरी शपथ शपथ मात्र बनकर रह गयी। इसका कारण शायद मैंने राक्षस-स्वभाव के विरुद्ध कोई दुष्कर्म किया होगा।'' लंबी साँस खींचता हुआ वह गुफ़ा की तरफ बढ़ा।

सिंहबल और युवराज आनंदित हुए घोड़ों पर चढ़कर नगर की ओर बढ़ते गये।

सुवर्ण रेखाएँ - ९

संसार में इन्हें कहाँ देख सकते हैं?

... कोला रीछ

कोला रीछों के शिशु, कंगारु जंतु के शिशुओं की ही तरह प्रथम छे महीने माता की पेट के नीचे की थैलियों में ही रहते हैं। खाते समय बड़े अल्हड़पन से पेश आते हैं। इनका मुख्य आहार है - युकलिप्टस पेड़ के पत्ते। क्या जानते हैं, ये कहाँ रहते हैं?

... समुद्र-कन्या की प्रतिमा

हान क्रिस्टियन यांडरसन सुप्रसिद्ध बाल-कथा रचयिता थे। उनकी स्मृति में छोटे-से एक समुद्र-कन्या की प्रतिमा की प्रतिष्ठापना की गयी। यह कांस्य प्रतिमा एक बंदरगाह के मुखद्वार पर है। जानते हैं, यह कहाँ है?

... मेडम टुत्साड्स वाक्स संग्रहालय

मेरी टुत्साड्स फ्रान्स की वनिता हैं। १९३४ में इन्होंने एक वस्तु-प्रदर्शनीशाला की स्थापना की। यह आज सुप्रसिद्ध व्यक्तियों के मोम की प्रतिमाओं की प्रदर्शनीशाला के नाम से सुविख्यात है। वह वस्तु-प्रदर्शनीशाला कहाँ है?

सोने के द्वार का पुल

कहा जाता है कि दुनिया में सबसे सुंदर पुल सोने के द्वार का पुल है। यह १२२० मीटरों का विशाल पुल है। इसका निर्माण हुआ १९३७ में। इस पार करना हो तो क्या मालूम है कि कहाँ जाना है ?
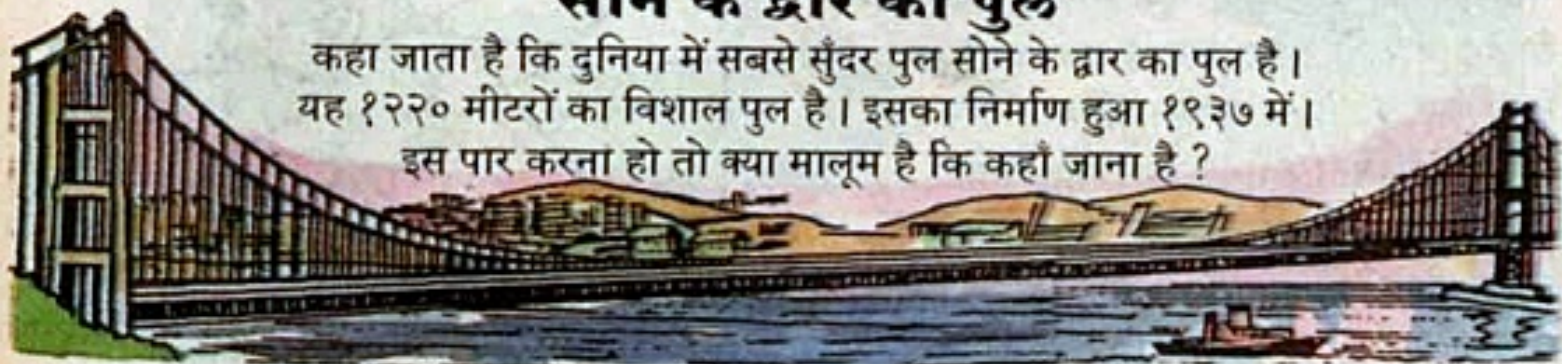
प्रश्नावली

१. दो अरबी यात्री सफ़र कर रहे हैं। एक के पास तीन रोटियाँ हैं तो दूसरे के पास पाँच रोटियाँ। रास्ते में उनकी मुलाक़ात एक आदमी से हुई। उसके पास रोटियाँ नहीं हैं, पर वह बहुत भूखा है। अरबी यात्रियों ने उसे भी अपने साथ बिठाया और तीनों ने मिलकर समान रूप से आठों रोटियाँ खा लीं। बाद तीसरे व्यक्ति ने अपनी रोटियों के लिए आठ चाँदी के सिक्के दिये और चला गया। उस रक़म को समान रूप से न्यायपूर्वक कैसे बाँट लेना चाहिये?

२. एक छोटी-सी छतरी के नीचे तीन मोटे आदमी एक-दूसरे को ढ़केलते हुए जा रहे हैं। फिर भी तीनों में से कोई नहीं भीगा। कैसे?

३. केले के छिलकों से जर्मन क्या बनाते हैं?

४. एक बस खाली-खाली जा रही थी। पहले अड्डे पर सोलह आदमी चढ़े। फिर रुक जाने पर सात चढ़े और तीन उतरे। बाद के अड्डे पर नौ आदमी चढ़े। पाँच उतरे। फिर से बस के रुक जाने पर पाँच आदमी चढ़े, तीन उतरे, आख़िरी अड्डे पर दो उतरे। कुल मिलाकर कितने अड्डों पर बस रुकी?

५. तीन रूमाल-दो सफ़ेद, एक लाल। एक-दूसरे से बंधे हैं। दो सफ़ेद रूमालें एक-दूसरे से। लाल रूमाल, सफ़ेद रूमाल बीच में हैं। गाँठ खोले बिना लाल रूमाल को दोनों सफ़ेद रूमालों के बीच लाना हो तो क्या करना होगा?

६. शब्द अवरोध से बचने के लिए मनुष्य से निर्मित प्रथम वस्तु क्या है?

७. पहले से ही पानी से भरे एक गिलास को उस क्षण मैंने छूया। गिलास से पानी की एक बूंद भी नीचे नहीं गिरी। पर मेज़ पर का कपड़ा भीग गया। कैसे?

८. युद्ध से बरबाद एक गाँव में कुछ ही आदमी बचे। हर दिन हर आदमी एक लीटर के हिसाब से पानी पिये तो वहाँ का पानी तेरह दिनों तक पीने के लिए ही पर्याप्त होगा। यह उन्हें मालूम है। पाँचवें दिन अकस्मात् थोड़ा-सा पानी नीचे गिर गया। उस दिन एक आदमी ने अपने हिस्से का पानी पी लिया और घावों की वजह से मर गया। उसके बाद बाक़ी लोग अपने हिस्से का पानी पीते रहे। शेष पानी, जैसा उन्होंने हिसाब लगाया, १३ दिनों तक पीते रहे। कितना पानी नीचे गिर गया ?

न्यायालय-नाटक :
बस में बैठे बलवंत शर्मा, बस के अकस्मात् रुक जाने से, अपने स्थल से उड़ता हुआ दूर जा गिरा। दायें हाथ को चोट लगी। उसने परिवहन संस्था पर मुक़द्दमा दायर किया कि चूँकि अपने दायें हाथ से कोई काम कर नहीं पाऊँगा, इसलिए मुझे दस लाख का हरजाना दिया जाए। परिवहन संस्था की तरफ़ से उपस्थित वकील ने शर्मा से कहा कि दिखाना, अपना हाथ कहाँ तक उठा सकते हो? शर्मा ने अपना हाथ कंधे तक उठाया। तब वकील ने पूछा "दुर्घटना के पहले अपना हाथ कितना ऊँचा उठा पाते थे?" शर्मा ने अपना हाथ अपने सिर से ऊपर उठाकर दिखाया।

"देखा, यह सज्जन कितना झूठ बोल रहा है। हम सबने देखा कि हमेशा की तरह यह अपना हाथ ऊपर उठा पा रहा है। स्पष्ट है कि इसके हाथ को कोई चोट नहीं लगी। इसलिए मेरी विनती है कि यह मुक़द्दमा खारिज किया जाए।" वकील ने अपनी दलील पेश की। फिर भी न्यायाधीश ने अपनी सम्मति नहीं दी। क्यों?

सुवर्ण रेखाएँ - ८ के उत्तर

१. राजस्थान के रणकपूर का आदिनाथ मंदिर २. कश्मीर का अमरनाथ
३. ईस्टर ऐलांड के आदिवासी

कोशिश कीजिये !

बाडी रोल

गेंद के इस खेल को मज़े से खेल सकते हैं।

अ - टेनिस गेंद को दायें हाथ में पकड़िये।

आ - दोनों हाथों को ऊपर उठाकर अंग्रेज़ी अक्षर 'टी' के आकार में खड़े हो जाइये।

ई - अपने हाथ की गेंद को दायें हाथ के ऊपर से लुढकाइये।

वह कोहनी, भुजा, छाती से लुढकती हुई जायेगी और बायीं भुजा व कोहनी से निकलती हुई बायें हाथ में पहुँचेगी। सक्रम रूप से अगर आप ऐसा कर सकें तो गेंद को बायें हाथ से दायें हाथ में पहुँचाने की कोशिश कीजिये।

टेड्डी बेर की तस्वीर

आवश्यक वस्तु

पुराना प्लास्टिक टेड्डी बेर, प्लास्टर आफ़ पारीस, कैंची, धागे का एक टुकड़ा, कुछ रंग

बनाने की पद्धति

१. प्लास्टिक टेड्डी बेर को सीधे दो भागों में कतरिये।

२. प्लास्टर आफ पारीस में पानी मिलाइये। खूब मलने के बाद पिंड-सा बनाइये।

३. कतरे गये बेर के दोनों भागों में पिंड को भरिये। दोनों को एक बनाकर धागे से बाँधिये।

४. प्लास्टर आफ़ पारीस जब तक सख्त नहीं होता तब तक बगल में रखिये।

५. उसके बाद धीरे-धीरे प्लास्टिक की तस्वीर को निकालिये। अब प्लास्टर आफ पारीस को टड्डी बेर का आकार मिल जायेगा।

६. आख़िर टेड्डी बेर की आँखों, नाक और मुँह पर रंग पोतिये।

महाभारत

भीम का शाप-विमोचन - ३२

एक वर्ष के अरण्यवास के बाद अर्जुन इंद्रलोक गया। वहाँ से लौटते-लौटते पाँच साल गुज़र गये। उसके लौटने के बाद चार सालों तक वे गंधमादन पर्वत प्रांतों में रहे। कुबेर की अनुमति पाकर और उससे नियुक्त किये गये यक्षों की सहायता से पांडवों ने दिव्य उन प्रदेशों के सौंदर्य को भली-भांति निहारा। उनके अरण्यवास के दस वर्ष यों गुज़र गये। यहाँ ग्यारहवाँ वर्ष भी पूरा हुआ। शीघ्र ही बारहवाँ वर्ष भी समाप्त होने जा रहा है। उपरांत अज्ञातवास भी पूरा करेंगे और कौरवों से युद्ध करके अपने प्रतिशोध की अग्नि बुझाएँगे। उस समय की बड़ी ही आतुरता से प्रतीक्षा कर रहा है भीम। उसने एक दिन अग्रज धर्मराज से अपने मन की बात निस्संकोच बता भी दी। अर्जुन, नकुल, सहदेव ने भीम का समर्थन किया। उनकी बातों से स्पष्ट गोचर हो रहा था कि वे भी इसी समय की प्रतीक्षा में हैं।

धर्मराज ने उनके भाव भाँप लिये और उन देवप्रांतों को छोड़कर चले जाने का निश्चय किया। भीम ने जैसे ही स्मरण किया, घटोत्कच अपने अनुचरों के साथ वहाँ उपस्थित हो गया। पांडवों को उन्होंने वृष पर्व के आश्रम में पहुँचाया। वहाँ से वे बदरिकारण्य में आये। उस सुँदर अरण्य में वे एक महीने तक रहे। वहाँ से वे किरात देश सुबाहपुर में आये। इंद्रसेन, विशोक आदि पांडवों के सहयात्री वहीं ठहर गये। घटोत्कच और उसके अनुचरों को भी उन्होंने वहाँ से भेज दिया और पैदल चलते हुए हिमालय के विशाखयूप पहुँचे।

उस प्राँत में आखेट करने बहुत ही मृग हैं। आखेट करने में उनकी बड़ी रुचि है, अतः एक साल तक पांडव वहीं रह गये।

भीम एक दिन हथियार लिये आखेट

करने निकला। उसने बहुत-से जंतुओं को मार डाला। जब वह इस क्रिया में मग्न था, तब उसने अचानक एक महासर्प को देखा। वह हरे रंग का सर्प था। उसका मुँह पर्वत-गुफ़ा की तरह विशाल था। उसके मुँह में अति भयंकर चार दाँत थे। उसकी आँखें प्रकाश से भरी हुई थीं। उसके मुँह से विष-ज्वालाएँ निकल रही थीं और बड़े-बड़े वृक्षों को भी जला रही थीं। ऐसे भयंकर सर्प से भीम भिड़ गया। उसने तुरंत भीम के शरीर को लपेट लिया। क्षण भर के लिए निस्तेज भीम ने उससे छुटकारा पाने की ज़बरदस्त कोशिश की। भीम का बल हज़ार हाथियों के समान है, पर अपने बल का प्रयोग करने के बाद भी वह इस प्रयत्न में असफल ही रहा। सर्प के बंधन से वह मुक्त नहीं हो पाया।

भीम समय पर नहीं लौटा तो धर्मराज उसी दिशा में गया, जिस दशा में भीम गया था। अर्जुन, नकुल और सहदेव को द्रौपदी की रक्षा का भार सौंपा। दौम्य भी उसके साथ-साथ गया। मार्ग में भीम से मारे गये जंतुओं के ढ़ेर थे, इसलिए उन्हें उसे खोजने में कष्ट नहीं हुआ।

धर्मराज ने देखा कि भीम सर्प के पाश में बंधा हुआ है और अब वह असहाय होकर निराश दीख रहा है। धर्मराज की समझ में नहीं आया कि भीम क्यों और कैसे सर्प के मुँह में फँस गया। उसने सर्प को संबोधित करते हुए कहा ''सर्पराज, तुम्हें आहार ही चाहिये, तो कहो, क्या चाहते हो। तुम जो भी चाहोगे, दूँगा। मेरे भ्राता को छोड़ दो।''

सर्प ने कहा ''महाशय, तुम्हारा भ्राता संयोगवश मेरे चंगुल में फँस गया। मैं उसे किसी भी हालत में नहीं छोड़ूँगा। तुम भी यहीं रहना चाहते हो तो रहो। तुम्हें कल निगल डालूँगा।''

दर्प से भरे उसके उत्तर को सुनकर धर्मराज ने पूछा ''बताओ, तुम हो कौन?''

''मैं तुम्हारा पूर्वज हूँ। मेरा नाम नहुष है। चंद्र की सातवीं पीढ़ी का हूँ। अपने जीवन-काल में मैंने अनेकों पुण्य कार्य किये। अमित तपस्या करके इंद्र पद पाया। इंद्र का पद पाते ही मैं घमंडी बन गया। अपनी सीमाएँ लाँघ गया। ब्राह्मणों का अपमान किया। अगस्त्य नामक मुनि मुझपर क्रोधित हुए। मुझे सर्प बन जाने का शाप दिया। किन्तु उन्हीं की कृपा से मुझे पूर्व स्मृतियाँ

और असीम बल प्राप्त हुए। उन्होंने ने मुझसे कहा भी कि जो मेरे प्रश्नों का सही उत्तर देगा, उससे मुझे शाप से मुक्ति मिलेगी।'' सर्प ने कहा।

''तो पूछो, यथाशक्ति मैं सही उत्तर देने का प्रयत्न करूँगा। प्रश्न पूछो'' धर्मराज ने कहा।

''ब्राह्मण कौन है? उसे क्या जानना आवश्यक है?'' सर्प ने पूछा। ''जो उत्तर मुझे सही लग रहा है, बता रहा हूँ। ब्राह्मण वह है, जिसमें सत्य, दान, सहनशक्ति, तपस्या, दया, करुणा आदि गुण हों। उसे जो जानना चाहिये वह है - उस परब्रह्म-तत्व को जिसमें न ही सुख है, न ही दुख।'' धर्मराज ने कहा।

''राजन्, तुमसे बताये गये सब गुण अगर शूद्र में हों तो उसे क्या ब्राह्मण कहा जा सकता है? तुमने कहा कि परब्रह्म-तत्व सुख-दुखों से परे है। क्या संसार में ऐसा कुछ भी नहीं, जो सुख-दुखों से परे हो?'' सर्प ने पूछा।

''जिसमें सत्य, दान, दया आदि गुण हों, वह शूद्र नहीं। अगर ये गुण ब्राह्मण में नहीं हों तो वह ब्राह्मण नहीं है। सदाचार सर्वोत्तम है। जिस प्रकार शीतोष्ण के मध्य शून्य है, उसी प्रकार सुख-दुखों से भिन्न इस संसार में कुछ है नहीं। इन द्वंद्वों के परे एक ही है और वह है परब्रह्म-तत्व।'' धर्मराज ने कहा।

''तुमने कहा कि सदाचार सर्वोत्तम है। सदाचार मात्र से अगर कोई ब्राह्मण बन जाए तो वर्णाश्रमों की क्या आवश्यकता?'' सर्प ने पूछा।

धर्मराज ने कहा 'बोलना, पैदा होना, मर जाना, बच्चों को जन्म देना सब मानवों के लिए समान व सहज हैं। किन्तु पूर्व जाति- सांकर्य के कारण वर्ण-विभाजन अवश्यंभावी हो गया। वेद के ज्ञाताओं का मुख्य गुण हो - उनका सदाचार, उनकी व्यवहार-शैली। ब्राह्मण स्त्री की कोख से जन्मा प्राणी भी तब तक शूद्र के समान ही है, जब तक वह संस्कारी नहीं होता। अपने जीवन-काल में सत्य आदि सद्गुणों को ग्रहण करने पर ब्राह्मण बनता है। ऐसा गुण-ग्राही शूद्र भी ब्राह्मण है, स्वयं मनु ने बहुत पूर्व कहा।''

तब सर्प ने कहा ''तुम्हारे समाधानों ने मुझे संतृप्त किया। मैं तुम्हारे भ्राता को

निगलूँगा नहीं।" तब वह स्वयं शाप से मुक्त हुआ और पूर्व नहुष रूप प्राप्त किया। इतने में स्वर्ग से विमान आया, जिसमें बैठकर नहुष स्वर्ग चला गया।

धर्मराज ने यों अपने भाई को सर्प से छुड़ाया और दौम्य सहित अपनी पर्णशाला पहुँचा। फिर सब से सविस्तार बताया, जो हुआ। सबको भीम के दुस्साहस पर और धर्मराज के ज्ञान पर आश्चर्य हुआ।

वर्षा काल के समाप्त होते तक पांडव द्वैतवन में ही रहे। ब्राह्मणों व परिवार को लेकर वे काम्यकवन पहुँचे। ऋषियों ने वहाँ उनका स्वागत किया।

श्रीकृष्ण, सत्यभामा को लेकर पांडवों को देखने वहाँ आया। सब पांडवों की उपस्थिति में श्रीकृष्ण ने धर्मराज से कहा "राजन्, यद्यपि इतने वर्षों तक अरण्य ही तुम्हारा निवास-स्थल है, पर तुमने अरण्य-धर्मों का पालन नहीं किया। राजधर्म निभाते रहे। धर्मराज तुम्हारा सार्थक नाम है। जैसे ही निर्णीत काल पूरा होगा, हम सब तुम्हारा साथ देंगे और स्वार्थी, कपटी, ईर्ष्यालू उन कौरवों का समूल नाश करेंगे। यह निश्चित है कि तुम राजा बनोगे।" फिर उसने द्रौपदी से कहा "पाँचाली, दुर्योधन के सिर पर मौत मंडरा रही है। सुभद्रा तुम्हारे बच्चों की अच्छी तरह से देख-भाल कर रही है। प्रद्युम्न उन्हें धनुर्विद्या सिखा रहा है।"

धर्मराज ने कृष्ण को प्रणाम करते हुए कहा "तुम ही हमारे आधार हो। अरण्यवास समाप्त होनेवाला है। तुम्हारी दया से अज्ञातवास का एक वर्ष भी सफलतापूर्वक समाप्त हो जाए तो तुम्हें ही हमारा मार्ग-दर्शन करना होगा। तब तुम ही आज्ञा दो कि हमें क्या करना चाहिये।"

कृष्ण जब वहाँ था, तब मार्कंडेय भी आया। उसकी आयु दीर्घ है। परंतु देखने में बीस वर्ष की आयु का लगता है। उसका मुख तेजस्व से भरा हुआ है। मार्कंडेय चाहता है कि वहाँ उपस्थित सबों को अनेकों कथाएँ सुनाऊँ और अनुकरणीय धर्म-सूत्र बताऊँ। आश्रम के बाहर यह गोष्ठी चल रही थी तो अंदर सत्यभामा और द्रौपदी बातों में मग्न थीं।

सत्यभामा ने द्रौपदी से पूछा "तुम्हारे पति शूर-वीर हैं। दिक्पालों से कुछ कम नहीं हैं। मुझे आश्चर्य तो इस बात का है कि ऐसे बलवान पाँच पति कैसे तुम्हारे वश

में रह रहे हैं। वे तुम्हारे मन को कभी नही दुखाते। ऐसा कोई काम नहीं करते, जो तुम्हें पसंद न हो। तुम्हारा बड़ा आदर करते हैं। इसका क्या कारण है? उन्हें अपने वश में रखने के लिए क्या तुमने पूजाएँ की? व्रत रखे? मंत्र या जड़ी-बूटियों का प्रयोग करके अपने वश में रखा? मुझे भी यह रहस्य बताओ, जिससे मैं अपने पति को अपने वश में रख सकूं। मेरे पतिदेव का स्वभाव तुम तो जानती ही हो।''

द्रौपदी ने कहा ''सत्यभामा, तुमने वशीकरण के जिन मंत्र-तंत्रों की बातें कीं, उनका उपयोग बुरी स्त्रीयाँ ही करती हैं। कृष्ण की पत्नी होते हुए ऐसी बातें करना तुम्हें शोभा नहीं देता। मेरे बारे में तुम्हारे मन में उत्पन्न संदेह भी त्रृटिपूर्ण हैं। पत्नी, पति को अपने वश में करने के लिए मंत्र-तंत्रों का सहारा ले और पति को यह मालूम हो, तो क्या वह उसकी आँखों से गिर नहीं जायेगी? पति की दृष्टि में ऐसी स्त्री का मूल्य ही क्या रह जायेगा। क्या वह पत्नी उसे विष-भरी सांपिन नहीं लगेगी? सुनो, जानो कि पांडव क्यों मेरे प्रति इतने प्रेम से व्यवहार करते हैं। मैं अनावश्यक माँगें प्रस्तुत नहीं करती। अगर मेरी उचित माँगें भी वे पूरी नहीं कर पाते तो मैं रूठती नहीं। मेरा विश्वास है कि मेरे पति मुझे हृदयपूर्वक चाहते हैं। इसका यह मतलब नहीं कि उनकी सेवाएँ न करूँ। अपने कर्तव्यों में कभी ढिलाई नहीं आने देती। उनकी सेवाएँ मैं स्वयं करती हूँ। दास-दासियों के भरोसे कभी नहीं छोड़ती। उन्हें जिस प्रकार का भोजन व पदार्थ पसंद हैं, स्वयं बनाती हूँ और खिलाती हूँ। वे जब भी कुछ कहते या करते हैं, तब मैं उसका विरोध करती ही नहीं। अकारण मैं नहीं हँसती। अपनी सौतनों को देखकर कभी ईर्ष्या नहीं करती। श्री धर्मराज इंद्रप्रस्थ में जब राज्य करते थे, तब हज़ारों ब्राह्मण, ब्रह्मचारी, सन्यासी अतिथि बनकर आते-जाते थे। मैं स्वयं उनके सत्कार का कार्य संभालती थी। ये ही नहीं, बल्कि पांडवों की और पत्नियाँ, हज़ारों दास-दासियाँ, पशु-पालक आदि रहते थे। उनके कुशल-मंगल की देखरेख भी मैं स्वयं संभालती थी। आख़िर खज़ाने का हिसाब भी मैं ही देखा करती थी। संक्षेप में परिवार का पूरा भार मैं ही संभालती थी। इसी

कारण मेरे पति मुझे चाहते हैं, मेरा विश्वास करते हैं। अगर तुम यह समझती हो कि मंत्र-तंत्रों के बल पर उन्हें अपने वश में रख रही हूँ तो तुम्हारा यह संदेह निराधार व त्रुटिपूर्ण है।''

सत्यभामा ने ध्यान से द्रौपदी की बातें सुनीं और कहा ''ऐसा पूछकर मैंने सचमुच ही बड़ी ग़लती की। अब इसका मुझे पश्चात्ताप हो रहा है। अब मैं जान गयी कि मुझमें क्या त्रुटियाँ हैं। मुझमें सेवा-भाव का लोप है। मुझमें ईर्ष्या कूटकूट कर भरी पड़ी है। मेरी माँगे पूरी न होने पर बार-बार रूठ जाती हूँ। तुमने मेरी आँखें खोल दीं। तुम मुझसे क्रोधित न होना। समझ लेना मैंने केवल मज़ाक किया।''

महामुनि मार्कंडेय, श्रीकृष्ण, सत्यभामा ने पांडवों से अनुमति ली और अपनी-अपनी दिशाओं में चले गये। तभी पांडवों ने काम्यक वन छोड़ दिया और पुनः द्वैतवन आये।

पांडव जब द्वैतवन में थे, तब एक ब्राह्मण वहाँ से हस्तिनापुर गया और धृतराष्ट्र से कहा ''महाराज, मैं द्वैतवन से आ रहा हूँ। वहाँ पांडव सर्दी, गर्मी, वायु के शिकार होकर तरह-तरह के कष्ट झेल रहे हैं। लोक-विजेता पाँच पतियों के होते हुए भी द्रौपदी अनाथ होकर जी रही है। उसके कष्ट वर्णनातीत हैं।''

यह सुनकर धृतराष्ट्र को बहुत दुख हुआ। क्योंकि वह जानता था कि उसकी उपेक्षा के कारण ही पांडवों व द्रौपदी को इतने कष्ट झेलने पड़ रहे हैं। उसने ब्राह्मण से कहा ''मेरे सब पुत्रों से धर्मराज उत्तम है। उसके मन में क्रोध ही नहीं होता। अर्जुन, धर्मराज का विधेय है। पर भीम की प्रवृत्ति भिन्न है। वह महाबली है। उसके मन में क्रोध भरा पड़ा है। किन्तु वचनबद्ध धर्मराज के विरोध में वह कुछ नहीं कहता। मन मसोसकर चुप बैठा है। मेरा पुत्र दुर्योधन दुष्ट स्वभाव का है। उसकी बुद्धि वक्र है। उसके अन्यायों के कारण ही पांडवों को इतने कष्ट झेलने पड़ रहे हैं। अगर भविष्य में पांडवों को आधा राज्य दे देगा तो कोई विपत्ति नहीं होगी। किन्तु मैं जानता हूँ, वह उन्हें आधा राज्य नहीं देगा। उसका स्वभाव ही ऐसा है। अवश्य ही यह उसके विनाश का कारक होगा।''

चिड़चिड़े स्वभाव का कर्मचारी

भवानी नगर की ज़मींदारी के जंगली प्रांतों में इधर दो-तीन सालों से वर्षा ही नहीं हुई। इस कारण वहाँ के किसान कर चुका नहीं पा रहे हैं। वहाँ के ज़मींदार का कर्मचारी वामन बड़ा ही उदार व्यक्ति है। उसने किसानों की दुस्थिति देखी, इसलिये वह उनपर जबरदस्ती नहीं कर सका, उनपर दबाव डालने की उसकी इच्छा नहीं हुई। इसलिए ज़मींदार को जो रकम भेजनी थी, भेजी नहीं जा सकी। वामन ने खज़ाने के तत्संबंधी अधिकारियों को पूरा विवरण भी भेजा कि कर क्यों वसूला जा नहीं सका। किन्तु ज़मींदार को उसकी दलीलें व कारण सही नहीं लगे। फलस्वरूप वह नौकरी से हटा दिया गया। उसने दिवान को हुक्म दिया कि शेषफणि नामक व्यक्ति वामन की जगह पर नियुक्त किया जाए।

शेषफणि चिड़चिड़े स्वभाव का है। उसमें दया, करुणा नाम मात्र के लिए भी नहीं हैं। उसने वहाँ के एक बड़े गाँव में अपनी कचहरी खोली और मुनादी पिटवायी कि जो किसान कर नहीं देंगे, उन्हें ज़मीन पर उल्टे लिटाऊँगा और उनकी पीठों पर भारी पत्थर रखवाऊँगा। उस गाँव में प्रताप नामक एक युवक है। वह सिर्फ़ अक़्लमंद ही नहीं बल्कि सही समय पर सही निर्णय लेने की अद्भुत शक्ति रखता है। विवरण जानते ही वह शेषफणि के पास गया और प्रणाम करके कहा "मालिक, वर्षा न होने से यहाँ फ़सलें नहीं हुई। ऊपर से लुटेरे बार-बार ग्रामीणों को लूट रहे हैं।"

लुटेरों की बात सुनते ही शेषफणि घबरा गया, पर अपनी घबराहट को छिपाते हुए गंभीर स्वर में बोला, "मैं यहाँ कर वसूल करने आया हूँ, बारिश बरसाने नहीं। मैं ज़रा जानूँ भी कि आख़िर उन लुटेरों से बचने के लिए कर क्या रहे हो ?" प्रताप ने कहा "अच्छी नस्ल के कुत्तों को पाल रहे हैं।"

शेषफणि ने थोड़ा-सा काँपते हुए पूछा, "वे कुत्ते हैं कहाँ ?"

"मेरे ही पास हैं। जैसे ही नये लोगों को वे देखते हैं, हो हो करने लगते हैं" प्रताप ने कहा। शेषफणि ने व्यंग्य-भरे स्वर में कहा "असली नस्ल के कुत्ते हो हो कहकर नहीं चिल्लाते, भौं भौं कहकर चिल्लाते हैं।" कहकर वह भौं भौं कहकर लगातार कुत्तों की तरह चिल्लाने लगा। उसके नौकर ज़मींदार के पास दौड़े-दौड़े गये और उन्होंने ज़मींदार को इसकी ख़बर दी। ज़मींदार ने दिवान को बुलाकर कहा "लगता है कि शेषफणि पर भूत चढ़ गया या वह किसी तंत्र-शक्ति के अधीन है। आप फ़ौरन वहाँ जाइये और विषय जानिये। जो आगे करना है स्वयं निर्णय लेकर कीजिये।"

दिवान ने वहाँ जाकर किसानों की दुस्थिति जानी। वामन को फिर से नौकरी पर रखा और प्रताप को उसके सलाहकार के रूप में नियुक्त किया। शेषफणि को नौकरी से हटा दिया।

-नरेन्द्र सिन्हा

'चन्दामामा' परिशिष्ट - ९९

हमारे देश के वृक्ष

केले का पेड़

आम, कटहल, केला तीनों मुख्य फल माने जाते हैं। इसी तरह केला, आम, बेर, गूलर, इमली पाँच मुख्य वृक्ष माने जाते हैं। इनसे संबंधित एक विचित्र कहानी कुछ प्राँतों में प्रचलित है। एक समय था, जब कि ये पाँचों वृक्ष मानव रूप में पाँच बहनें थीं। बहुत समय तक उनकी शादी नहीं हो पायी। भगवान ने उन्हें एक दिन दर्शन दिया और उनसे पूछा कि क्या शादी करोगी ? चार बहनें शादी के लिए तैयार हो गयीं। किन्तु सबसे छोटी बहन ने शादी करने से इनकार कर दिया। वह केवल संतान चाहती थी। कहा जाता है कि भगवान ने इन बहनों को वृक्ष बना दिया और कहा कि जो पुरुष इन पेड़ों पर रेंगते हुए ऊपर तक जाएँगे, उन्हीं पुरुषों से उनका विवाह होगा।

इस कहानी के द्वारा हमें ज्ञात होता है कि अन्य चारों वृक्षों पर चढ़ा जा सकता है पर सबसे छोटी बहन-केले के पेड़ पर चढ़ नहीं सकते।

केले को संस्कृत में 'मोचा', 'कंदली' कहते हैं। हिन्दी में 'केला', अंग्रेजी में 'बनाना' 'प्लांटेन' 'आडम यापिल' कहते हैं। अनेकों भारतीय भाषाओं में केले को 'कदली' कहते हैं।

तमिल और मलयालम में 'वाले', तेलुगु में 'अरटि चेट्टु' कहते हैं। बौद्ध केले को पवित्र मानते हैं। बौद्ध साहित्य में उल्लिखित 'मोचापाना' केलों से ही बनाते हैं। हमारे पुराणों के अनुसार हनुमान हिमालय प्राँतों में कदलीवन नामक केलों के बाग़ में रहते थे।

केलों के फूल, फल, तने का कोमल भाग आहार पदार्थों के रूप में उपयोग में लाये जाते हैं।

कच्चे फलों का रंग हरा होता है, पर फल हरे और पीले व लाल रंग के होते हैं। परिमाण में छोटे-बड़े का फरक होता है। कहते हैं कि केलों में ५००० प्रकार हैं। किन्तु सब प्रकार के फल मीठे और रुचिकर होते हैं।

केले के पत्ते पाँच-छे फुट के लंबे और चौड़े होते हैं। दक्षिण भारत में भोजन इन पत्तों पर परोसा जाता है।

विवाह आदि शुभ कार्यों के समय पर मंडप, इसके पेड़ों व पत्तों से सजाया जाता है। इनसे तोरण भी बाँधे जाते हैं। इन्हें शुभप्रद माना जाता है।

जब फल पक जाते हैं तब पेड़ काट दिया जाता है। काटे गये पेड़ के तने के चारों और फैले कंदों से नये पेड़ उग आते हैं।

भरद्वाज

दीर्घ काल तक जीवित रहने के बाद भी और कुछ अवधि तक जीने की इच्छा मनुष्य में साधारणतया होती है और यह सहज है। किन्तु और जीवित रहने की इच्छा उन्नत आशयों को लेकर हो तो यह न्याय-संगत है। विज्ञ ऐसी इच्छाओं को सही मानते हैं। सप्त ऋषियों में से एक भरद्वाज मुनि की कथा इसका एक सुंदर उदाहरण है।

भरद्वाज, अत्रि महामुनि के सुपुत्र हैं। आदि काव्य रामायण के रचयिता वाल्मीकि महामुनि के ये शिष्य रहे। उनसे वेदों का अध्ययन किया। फिर भी ज्ञान की उनकी प्यास नहीं बुझी।

इंद्र आदि देवताओं का आशीर्वाद इन्होंने पाया। वे सुदीर्घ काल तक जीवित रहे। संपूर्ण जीवन इन्होंने वेदाध्ययन व ध्यान में ही व्यतीत किया। अवसान दशा आसन्न हुई। भरद्वाज ने पुनः देवनाथ इंद्र का ध्यान किया और उनसे प्रार्थना की कि उनकी आयु और बढ़ायी जाए।

इंद्र प्रत्यक्ष हुए और भरद्वाज को अपने साथ चलने लिए कहा। थोड़ी दूर जाने के बाद उन्होंने देखा कि दूरी पर तीन ऊंचे-ऊंचे पर्वत हैं। इंद्र ने भरद्वाज से कहा कि वे अपनी मुट्ठी फैलाएँ। तीन मुट्ठी भर की रेत उसमें डाली। भरद्वाज मौन रहे।

"दूर दिखायी देनेवाले तीन पर्वतों से तुलना की जाए तो तुम्हारी मुट्ठियों में भरी पड़ी रेत का क्या परिमाण है?" इंद्र ने पूछा।

"बहुत ही अल्प। तुलना ही नहीं हो सकती।" भरद्वाज ने कहा। "तुमने जो वेद-ज्ञान पाया, वह भी इसी समान है। तुमने जो ज्ञानार्जन किया, वह मुट्ठी भर का है। तुम्हें और जो जानना है, वह उन पर्वतों के समान विस्तृत व दीर्घ है।" इंद्र ने कहा।

इंद्र ने सोचा कि भरद्वाज मेरी बातों से घबरा जायेगा और वह संभवतया कहेगा कि जो ज्ञान मैंने प्राप्त किया, वह पर्याप्त है। अथवा अहंकार-पूरित होकर कहेगा कि मुझे सब कुछ मालूम है। किन्तु थोड़ी देर मौन रहने के बाद भरद्वाज ने सविनय कहा "ज्ञान इतना उन्नत है! तब तो संपूर्ण रूप से मुझे प्राप्त करना होगा। आपके आशीर्वाद हों तो इन तीनों पर्वतों पर विजय पाने का प्रयत्न करूँगा।"

भरद्वाज के स्थिर, अचंचल आत्म-विश्वास व उसके उन्नत लक्ष्य पर इंद्र को अमित आश्चर्य हुआ। और एक जीवन-काल की आयु देकर इंद्र अंतर्धान हो गये।

क्या तुम जानते हो?

१. ताजमहल आगरे में है। 'आग्रावना' नामक शब्द से इसका यह नाम पड़ा। इसका क्या अर्थ है?
२. १९७२ में बाघ हमारा राष्ट्रीय मृग घोषित हुआ। उसके पहले हमारा राष्ट्रीय मृग क्या था?
३. मुजिबूर रहमान बंगला देश के देशपिता के नाम से सुविख्यात हुए। उनकी बेटी षेक हसीना वर्तमान प्रधान मंत्री हैं। इंडोनेशिया के वर्तमान प्रधान मंत्री सुहार्ता से, सुकर्नो की बेटी अधिकार प्राप्त करने के लिए लड़ रही हैं। उनका क्या नाम है?
४. सब जानते हैं कि भारत के प्रधान मंत्री श्री देवेगौडा कर्नाटक प्रांत के हैं। क्या तुम जानते हो कि वे किस जिले के हैं?
५. हिरोषिमा, नागासाकी पर बम गिराने के बाद जापान ने अपनी हार मान ली। युद्ध भी समाप्त हो गया। पर पहले सोचा नहीं गया कि नागासांकी पर बम गिराया जाए। तो फिर किस नगर पर बम गिराने का उनका उद्देश्य था?
६. साधारणतया रसोईघरों में दिखायी देनेवाला एक कीड़ा बम के धमाके को सहकर ज़िन्दा रह सकता है। जानते हो, वह कौन-सा कीड़ा है?
७. अफ्रीका में ओवेन जलपात कहाँ है?
८. यद्यपि आधुनिक ओलंपिक क्रीडाओं का आरंभ १८९६ में हुआ, किन्तु ओलंपिक शपथ का प्रवेश बाद हुआ। वह कब हुआ?
९. हमारे देश में प्रप्रथम एस.टी.डी. का प्रवेश १९६० में हुआ। तद्वारा किन दो नगरों को मिलाया गया?
१०. बच्चों को बहुत पसंद आनेवाला आविष्कार किया इटालो मार्सियोनी ने। वह आविष्कार क्या है?
११. १८९५ में यह क्रीडा अमेरीका में आरंभ हुई। फिर एशिया के देशों में यह फैली। उस क्रीडा का क्या नाम है?
१२. 'कामनवेल्थ' का प्राचीन नाम क्या है?
१३. प्रथम 'टेस्ट सेंचुरी' को किस प्रथम भारतीय खिलाड़ी ने साधा।
१४. वे भारतीय नागरिक कौन हैं, जो पद्मश्री, पद्मभूषण, पद्मविभूषण, भारतरत्न, चारों उपाधियों से अलंकृत हुए।
१५. 'प्लानिंग कमीशन' पहले पहल किस वर्ष आयोजित हुई। प्रथम उपाध्यक्ष कौन थे?

उत्तर

१. स्वर्ग उद्यानवन
२. सिंह
३. मेघावती, सुकर्णी की पुत्री
४. हसन
५. हिरोषिमा के समीप का कोकूरा
६. तिलचट्टा
७. उगांडा
८. १९२०, अंट्वस ओलंपिक से
९. लखनऊ - कानपूर के बीच
१०. ऐसक्रीमकोन
११. वालीबाल
१२. ब्रिटिश एंपैर गेम्स
१३. लाला अमरनाथ
१४. सत्यजितराय
१५. १९५० में प्रोफेसर महालनोबिस

'चन्दामामा' की ख़बरें

लाल्लीपाप्स आकाश से

तायवान (फार्मोसा) की राजधानी तायपीय नगर में अचानक हेलिकाफ्टर की आवाज़ सुनायी पड़ी। सबके सब बच्चे घरों से बाहर आ गये और उन्होंने आकाश की ओर देखा। लाल्लीपाप के आकार का एक लाल हेलिकाफ्टर उन्हें घूमते हुए दिखायी पड़ा। वह जब और नीचे आया तब उन्हें

मालूम हुआ कि उसमें कोई चालक नहीं है। रिमोट कंट्रोल से आयोजित रेडियो तरंगों की सहायता से वह घूम रहा है। बच्चों को आश्चर्य में डुबो देनेवाली एक और बात हुई। आकाश में वह थोड़ी और देर घूमता रहा और जाते-जाते असली लाल्लीपाप्स को बिखेरता हुआ चला गया।

सबसे बड़ा बानर

चंद सालों के पहले ही मालूम हुआ कि ऐड्स बहुत ही भयंकर बीमारी है। इसकी कोई दवा नहीं है। एक ही मार्ग है और वह है - इस बीमारी के शिकार होने से अपने को बचाना और आवश्यक जागरूकता बरतना। सामान्य लोगों को इस भयंकर बीमारी के बारे में बताना बहुत ही आवश्यक है। सब देशों ने इस सत्य को जाना और माना। इसलिए टी.वी., रेडियो तथा पत्रिकाओं जैसे प्रचार साधनों के माध्यम से तीव्र रूप से प्रचार कर रहे हैं कि ऐड्स से अपनी रक्षा कैसे की जाए। दिन ब दिन ऐड्स व्याधिग्रस्तों की संख्या बढ़ती जा रही है, जो सचमुच खलबली मचा देनेवाला विषय है। इस महारोग को व्याप्त होने से रोकने के लिए दिसंबर पहली तारीख़ को संसार भर में ऐड्स दिवस मनाया गया। मुंबई में ऐड्स दिवस के पिछले दिन एक बड़ा जुलूस निकाला गया, जिसमें १०,००० लोगों ने भाग लिया। जुलूस में एक बहुत बड़ा बानर पकड़कर वे गये, जिसपर ऐड्स संबंधी विवरण लिखे हुए थे। साथ ही उन्होंने ऐड्स संबंधी नारे भी लगाये। क्या आप जानते हैं, इस बानर की लंबाई कितनी है? ४.५ कि.मी.। बताते हैं कि संसार में अब तक प्रदर्शित बानरों में से यही सबसे बड़ा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस बानर व जुलूस के कारण हज़ारों लोगों को ऐड्स संबंधी विवरण मालूम हुए।

धन देनेवाला शांताक्लज

बेर्लिन विश्वविद्यालय के एक कमरे में विशिष्ट दर्जे का प्रबंध हुआ। उसमें जितने भी लोगों ने भाग लिया, वे सब के सब उस विश्वविद्यालय के विद्यार्थी ही थे। पर सब के सब शांताक्लज की ही तरह का पहनावा पहनकर उपस्थित हुए। दाढ़ी भी सफ़ेद थी और बूढ़े बनकर आये। जानते हैं, ऐसा उन्होंने क्यों किया? वे जानना

चाहते थे कि शांताक्लज की तरह कैसे पात्र अदा करना है। क्रिस्टमस के दौरान शांताक्लज (सैंट निकोलस) की तरह अभिनय करनेवालों को यूरोप की कुछ संस्थाएँ पारितोषिक देती हैं। इस प्रकार कुछ उत्साही युवक क्रिस्टमस के समय थोड़ा-सा जेब-खर्च कमा लेते हैं।

पिता की चाह

समीर के तीन पुत्र और एक पुत्री थी। सब से छोटी सत्यवती जब तीन साल की आयु की थी तब उसकी माँ किसी विष-ज्वर से परलोक सिधारी। उस समय व्यापार से संबंधित कार्यों पर विदेश गया हुआ था समीर। कुछ समय बाद लौटे समीर को यह जब मालूम हुआ तो संतान को पास बिठाकर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। यद्यपि घर में नौकर-चाकर थे, फिर भी बच्चों की देख-भाल का भार स्वयं संभालने लगा। व्यापार की ओर ध्यान ही नहीं देने लगा। इस कारण समीर की संपत्ति के धट जाने की स्थिति उत्पन्न हो गयी। हीरों के व्यापार में सदा चौकन्ना रहना चाहिये। उसे लगा कि शायद इस व्यापार में पिछड़ जाऊँगा।

समीर ने यह जाना और पुनः व्यापार में लग जाना चाहा। इसके लिए आवश्यक तैयारियाँ भी कर लीं। उस समय गोदावरी पुष्कर उत्सव हो रहे थे। अपनी बेटी को लेकर पुष्कर में नहाने निकला।

वह काम पूरा करके लौटा समीर घर में क़दम रखते ही अपनी बेटी सत्यवती का नाम ले लेकर रोने लगा। तीनों बेटों ने बड़ी आतुरता से पूछा कि पिताजी, बहन सत्यवती कहाँ है? उसे क्या हुआ ? तब समीर ने उनसे कहा कि उस उत्सव में वह कहीं खो गयी।

इस घटना के कुछ हफ़्तों के बाद समीर ने, अपने पुत्रों की जिम्मेदारी नौकरों को सौंपी। जहाज़ में वह विदेश चला गया।

दस साल गुज़र गये। तीनों बेटे बड़े हुए। इन दस सालों में समीर मुश्किल से दस दिन अपने घर में रहा होगा। रात-दिन उसे समुद्र में ही यात्रा करती रहनी पड़ी।

एक बार अपने बेटों को देखने के लिए घर आये समीर ने अपने तीनों बेटों को पास बुलाया और कहा 'बेटो, हीरों के व्यापार में

सिर्फ दो नाविक बच गये, जिन्होंने जहाज की लकड़ियों के सहारे अपने को बचा लिया और समुद्र के किनारे आ पहुँचे। उनके द्वारा समीर के बेटों को मालूम हुआ कि उनके पिता मर चुके।

पिता की मौत की ख़बर सुनकर तीनों बेटों को बड़ा दुख हुआ। बड़े ने बाक़ी दोनों से कहा "पहले से ही पिताजी को शंका थी कि ऐसा होने की संभावना है, इसीलिए उन्होंने उत्तरी कक्ष की चाभी हमें दी। हम जाकर देखें कि उस संदूक में है क्या? उनकी आख़िरी चाह को पूरा करें।"

तीनों ने उत्तरी कक्ष के अंदर जाकर संदूक खोली। वह बिल्कुल खाली थी। उन्होंने सोचा था कि उसमें सोना व धन होगा। किन्तु काग़ज़ के एक छोटे टुकड़े के सिवा उसमें कुछ नहीं था। उसमें जो लिखा था, पढ़कर वे निस्तेज हो गये। उनकी आशा निराशा में बदल गयी। उस काग़ज के टुकड़े में समीर ने लिखा था "सिरिपुर में मेरा बाल्यमित्र भूपति रहता है। उसकी बेटी का विवाह तुम तीनों अपनी कमाई से करना। यही मेरी आख़िरी चाह है।"

उस रात को तीनों भाई सो नहीं सके। बड़ा बेटा मन ही मन क्रोधित होते हुए कहने लगा "ये भी कोई पिता हुए। एक पाई दिये बिना ही मर गये। भला क्यों किसी और की बेटी का ब्याह कराऊँ और अपने छोटे भाइयों को जीविका का मार्ग दिखाऊँ। क्या मैं इतना बुद्धिहीन और निकम्मा हूँ।" ऐसा सोचकर वह कहीं चला गया।

सबेरे दोनों भाई समझ गये कि बड़ा भाई

मैं व्यस्त हूँ। अधिकाधिक समय समुद्री यात्रा करता रहूँगा और किसी दिन समुद्र में ही मेरी मृत्यु हो जायेगी। अगर ऐसा हुआ तो तुम तीनों एक काम करो। ऊपर के उत्तरी कक्ष में काठ की बनी एक पुरानी संदूक है। उसे खोलकर देखना। परंतु याद रखना कि मेरी मृत्यु के बाद ही उसे कमरे के दरवाज़ों को खोलना होगा। और एक बात ध्यान से सुनना। साथ-साथ जन्मे अपनों के लिए किसी भी प्रकार के त्याग के लिए सन्नद्ध होना उत्तम धर्म माना जाता है।" कहकर उसने उत्तरी कक्ष की चाभी उन्हें दी।

कुछ समय बाद समीर व्यापार के कामों पर विदेश चला गया। जिस जहाज़ में वह यात्रा कर रहा था, वह तूफान में डूब गया। सबके सब यात्री समुद्र में डूबकर मर गये।

घर छोड़कर चला गया। तब छोटे ने दूसरे से कहा "हम ही सही, पिताजी की इच्छा पूरी करेंगे। यह घर बेच डालें और उस धन से भूपति की बेटी की शादी कराएँ। फिर कहीं नौकरी करेंगे और अपनी जीविका चलाएँगे।" दूसरे ने उसकी बात मान ली। अपनी स्वीकृति दी।

उन्होंने घर बेच दिया और उस धन को लेकर सिरिपुर जाने निकल पड़े। शाम तक वे एक छोटे गाँव में पहुँचे। ग्रामाधिकारी के घर के आगे पंचायत हो रही थी। उन्होंने देखा कि दो युवक और एक बूढ़ी मुखिया का फ़ैसला सुनने खड़े हैं। भाइयों ने भीड़ में से एक आदमी से पूछा कि मामला क्या है?

उसने कहा "इस बूढ़ी के ये दो बेटे हैं। इनके अलावा शादी के लायक़ एक बेटी भी है। जब पिता ज़िन्दा था, तब सब मिल जुलकर रहते थे। उसके मर जाने के बाद बेटों ने जायदाद बाँट ली और अलग-अलग रहने लगे। माँ और बहन की उन्होंने कोई परवाह ही नहीं की। माँ बेटों से कहती है कि पिता को तुम वादा दे चुके कि बहन की शादी करायेंगे और अब ऐसा करने से इनकार कर रहे हो। बेटों का कहना है कि जो है, पूरा खर्च करके बहन की शादी कराएँगे तो हमें बचेगा ही क्या? अपने परिवार हम कैसे चलाएँगे, अपने बच्चों की देखभाल कौन करेगा। पंचायत के प्रमुख सोच रहे हैं कि इस समस्या का परिष्कार कैसे किया जाए?"

दोनों भाई वहाँ से निकले और भोजनालय में भोजन करके रात को वहीं सो गये। दूसरा सोच में पड़ गया। आख़िर इस निर्णय पर

पहुँचा "जब बूढ़ी के दोनों बेटे अपनी बहन की शादी कराने के लिए राजी नहीं हैं तो भूपति की बेटी की शादी मैं क्यों कराऊँ, जिसकी सूरत तक मैंने नहीं देखी। भला इस बेग़ाने की शादी में अपना पैसा क्यों बहाऊँ? इस धन से मैं कोई व्यापार करूँगा, कमाऊँगा और आराम से अपनी ज़िंदगी गुज़ारूँगा।" धन की थैली चुपके से ली और तभी रफूचक्कर हो गया।

सबेरे जब छोटा उठा तो देखा कि न ही भाई है और न ही रुपयों की थैली। वह समझ गया कि क्या हुआ। वह अब कर भी क्या सकता था? भगवान के भरोसे पर सब छोड़ दिया और सिरिपुर निकला।

दो दिन पैदल चलने के बाद वह सिरिपुर पहुँचा। भूपति के घर का पता लगाया। वह चार मंजिलोंवाला भवन था। आश्चर्य में डूबे

उसकी समझ में नहीं आया कि इतने बड़े धनवान की बेटी की शादी मैं क्या करावूँ।

दरवाज़े के पास जाकर उसने बुलाया 'भूपतिजी'। उसकी समझ में नहीं आया कि पिताजी ने ऐसी इच्छा क्यों जाहिर की। लगभग पचास सालों के एक स्वस्थ व हट्टेकट्टे व्यक्ति ने दरवाज़ा खोला और कहा "मैं ही भूपति हूँ। तुम्हें क्या चाहिये ?"

"मैं समीर का तीसरा बेटा हूँ। मेरे पिताजी की आख़िरी इच्छा थी कि अपने पैसों से हम भाई आपकी बेटी की शादी करायें। जो धन लाया था, मेरा दूसरा भाई उठाकर ले गया। आप थोड़ा समय देंगे तो नौकरी या मज़दूरी करके धन कमाऊँगा और आपकी बेटी की शादी कराऊँगा। यों अपने पिताजी की अंतिम इच्छा पूरी करूँगा।"

भूपति ने बड़े ही प्यार से उसकी पीठ को थपथपाया और उसे अंदर ले गया। उसने कहा "तुम्हारे पिता और मैं बाल्य मित्र हैं। तुम्हारे पिता की मौत की ख़बर सुनकर मुझे बड़ा दुख हुआ। उन्होंने तुम लोगों के सुंदर भविष्य के लिए बड़ी ही जागरूकता बरती। चूँकि वह स्वयं अधिकतर विदेशों में रहा करता था, इसलिए सोचा कि लड़की का ठीक तरह से शायद लालन-पालन न हो, इसीलिए तुम्हारी बहन सत्यवती को मेरे संरक्षण में छोड़ा। वह अब मेरे ही पास रह रही है। किन्तु उसने तुम लोगों से कहा था कि सत्यवती पुष्करों के उत्सव में खो गयी। उन्होंने व्यापार में जो लाखों रुपये कमाये, वह धन भी मेरे ही पास सुरक्षित रखा। उसने मुझसे दृढ़पूर्वक कहा 'मेरे मरने के बाद, मेरे तीनों बेटों में से जो तुम्हारे घर पहुँचेगा, वही मेरी परीक्षा में उत्तीर्ण समझा जाएगा। उसी को मेरी पूरी जायदाद दो और सत्यवती की असली बात भी उससे ही कहो।' तुम अपने पिता की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए और अपने पिता की ही तरह योग्य साबित हुए। अच्छा, पहले अपनी बहन से मिलना, जो बड़ी ही बेचैनी से तुम्हारा इंतज़ार कर रही है" कहकर उसने सत्यवती को बुलाया।

भूपति की कही बातें सुनकर छोटा भाई आश्चर्य में पड़ गया। तब उसने देखा कि आभूषणों से सजी बाल लक्ष्मी देवी की तरह उसकी बहन सत्यवती आ रही है। उसे देखकर उसकी आँखों से आनंद-भरे आँसू बह पड़े।
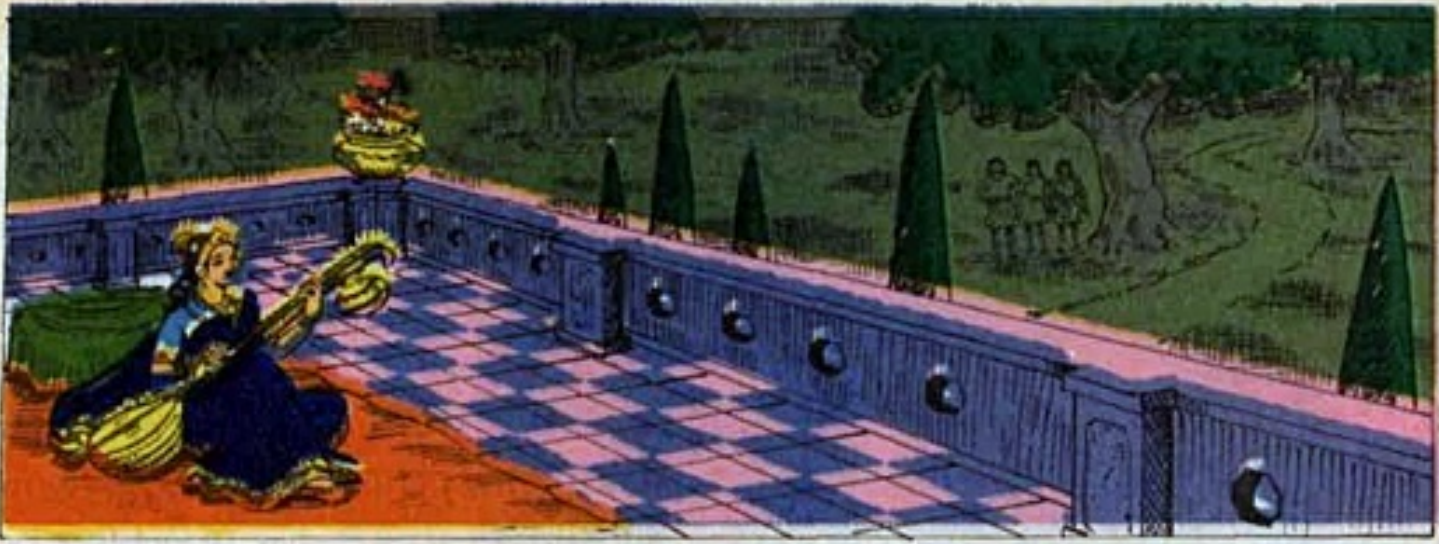
अपूर्व वस्तु

भवानी नगर में जयवर्मा नामक बहुत ही बड़ा धनी रहा करता था। उसके तीन बेटे थे - जयपाल, विजय, जय। रूपरेखाओं, विद्या-विनयों तथा आचार-विचारों में उनकी निकट समानता थी।

सच कहा जाए तो तीनों भाई सदाचारी थे। वे एक-दूसरे को बहुत चाहते भी थे। उनके बीच कोई रहस्य नहीं था। परंतु एक ऐसा रहस्य था, जिसके बारे में तीनों चुप्पी साधे बैठे थे। तीनों ने उस रहस्य को अपने तक ही सीमित रखा। वे तीनों भवानी नगर की राजकुमारी निरुपमा देवी को चाहते थे। तीनों ने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि किसी भी स्थिति में, किसी भी प्रकार राजकुमारी से विवाह करके ही रहेंगे। किन्तु तीनों ने अपना निश्चय प्रकट होने नहीं दिया।

तीनों संध्या समय राजभवन के पास ही के उद्यानबन में टहलने जाते थे। राजभवन के गलियारे में घूमती हुई राजकुमारी को तीनों भाई एकटक देखते रहते थे। किसी-किसी दिन उसका वीणा-गायन भी ध्यान से सुना करते थे। पर भाइयों ने कभी भी राजकुमारी के बारे में आपस में बात ही नहीं की।

यों काल बीत रहा था। एक दिन जयवर्मा ने अपने तीनों बेटों को बुलाकर उन्हें जागरूक किया "बेटो, मैं वृद्ध हो गया। मेरे कमाये धन से तुम लोग आराम से ज़िन्दगी गुज़ार सकते हो। पर, यह पुरुष-लक्षण नहीं है। शादी करने लायक़ हो गये हो। शादी के बाद तुम लोग अलग-अलग परिवार बसावोगे। तुम्हारी संतान होगी। क्रमशः धन घटता जायेगा। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम भिन्न देशों में घूमो, व्यापार करो और कमाओ। मेरी दृष्टि में ये पुरुष-लक्षण हैं। बाद शादी करो। फिर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करो।"

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

बिकने वहाँ आयीं। ऐसा इसके पहले कभी नहीं हुआ। सबसे छोटा जय निर्णयानुसार हाट में आया। साल ही में उसने बहुत धन कमाया। उसने सोचा कि भाइयों के आने के पहले कोई अपूर्व वस्तु खरीद लूँ।

वस्तुओं की राशि बिखरी पड़ी थी। उनमें से एक वस्तु से जय बहुत आकर्षित हुआ। वह नींबू फल था। परंतु वह कोई साधारण नींबू नहीं था। भयंकर रोग से पीडित व्यक्ति की चिकित्सा करने के गुण उसमें मौजूद थे। उस नींबू को काटकर उसका रस रोगी के मुँह में निचोड़ा जाए तो बस, तक्षण ही रोग की चिकित्सा हो जाती है। रोगी का रोग एकदम दूर हो जाता है। उसने हज़ार अशर्फ़ियाँ देकर नींबू खरीदा और अपने भाइयों की प्रतीक्षा करने लगा।

विजय भी उसी दिन वहाँ पहुँच गया। उसने भी व्यापार में खूब कमाया। उसने भी हज़ार अशर्फ़ियाँ देकर एक अपूर्व वस्तु खरीदी। वह था कालीन। यह भी कोई मामूली कालीन नहीं था। उसपर बैठो तो, जहाँ जाना चाहो जा सकते हो।

सबसे बड़ा जयपाल भी उसी दिन वहाँ पहुँचा। उसने भी अपार धन कमाया। उसे कई अपूर्व वस्तुएँ अच्छी लगीं। वह उन वस्तुओं के दाम पूछता रहा। आख़िर एक छोटी-सी दुकान में उसने एक दर्पण देखा। दुकानदार ने कहा कि इसकी क़ीमत हज़ार अशर्फ़ियाँ हैं।

"एक साधारण दर्पण का दाम हज़ार अशर्फ़ियाँ! इसकी ऐसी क्या ख़ासियत है?" जयपाल ने पूछा।

पिता की बातों को वे बहुत महत्व देते थे। उनकी खींची लक़ीर को पार करने का दुत्साहस उन्होंने अब तक कभी नहीं किया। उनकी सलाह को उन्होंने स्वीकार किया। शुभ मुहूर्त पर वे थोड़ा-सा धन लेकर निकल पड़े। पूरा दिन पैदल चलने के बाद वे महावट नामक हाटों के नगर में पहुँचे।

एक हाट में तीनों ने मनपसंद चीज़ें खरीदीं। उस दिन शिवरात्रि थी। दूसरे दिन सबेरे वे तीनों अलग-अलग दिशाओं में निकल पड़े। जाने के पहले तीनों ने निश्चय किया कि महावट की इसी हाट में शिवरात्रि के दिन फिर से मिलें।

हफ़्ते गुज़र गये, महीने बीत गये। फिर से शिवरात्रि का दिन आया। महावट की हाट ज़ोरों से चल रही थी। उस साल अपूर्व वस्तुएँ

"महाशय, यह सुँदरता दिखानेवाला दर्पण नहीं है। इस दर्पण में देखो तो दिखायी पड़ेगा वह प्राणी, जिसे तुम देखना चाहते हो, चाहे वह किसी भी स्थिति में क्यों न हो।" दुकानदार ने कहा।

जयपाल को तुरंत राजकुमारी निरुपमा देवी की याद आयी। उसमें उसे एक बार देखने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। उसने दुकानदार को हज़ार अशर्फ़ियाँ दीं और दर्पण खरीद लिया। निरुपमा देवी का स्मरण करते हुए उसने उसे दर्पण में देखा। दूसरे ही क्षण उसका हृदय दुख से भारी हो गया।

क्योंकि उस दर्पण में उसने राजकुमारी को देखा मरणावस्था में। वैद्य ने उसकी परीक्षा की और कह दिया "यह ज़िन्दा नहीं रहेगी, इसकी मौत निश्चित है। कुछ ही क्षणों में इसके प्राण-पखेरू उड़ जाएँगे।" वह वहाँ इस अवधि के अंदर पहुँच नहीं सकता, क्योंकि वहाँ पहुँचने में कम से कम एक दिन लगेगा। उसके, पहुँचते-पहुँचते वह मर चुकी होगी।

उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। वह लड़खड़ाता हुआ आगे बढ़ा तो जयपाल अपने भाई को देखकर चिल्ला पड़ा 'जयपाल भैया'।

भाई की आवाज़ सुनकर वह थोड़ा संभल गया। 'देखो' कहकर उसने राजकुमारी की दुस्थिति दर्पण में दिखायी। फिर उसने कहा "ऐसी स्थिति में हम यहाँ इतनी दूरी पर रह गये। उसे बचा न सके।"

"तुम डरो मत।" कहते हुए विजय ने कालीन दिखाया और उसे ज़मीन पर फैलाते हुए कहा "इसपर बैठ जाएँ तो क्षण भर में राजकुमारी की शय्या के बग़ल में होंगे।"

जयपाल में उत्साह भर आया। फैलाये हुए उस कालीन पर वे दोनों बैठने ही वाले थे कि इतने में 'भाइयो' कहता हुआ जय आ गया। "बोलने की अवधि नहीं है। तुम कालीन

पर बैठ जाओ। जीवित निरुपमा देवी को देख पायेंगे।'' विजय ने कहा।

बिना कुछ कहे जय चुपचाप कालीन पर बैठ गया। दूसरे ही क्षण वे निरुपमा की मरणशय्या के बग़ल में हैं।

जय और पास गया। नींबू को काटा और उसका रस उसके मुँह में निचोड़ा।

दूसरे ही क्षण राजकुमारी में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ। थोड़े क्षणों में वह उठकर बैठ गयी। वहाँ उपस्थित सबों ने आनंद के अश्रु बहाये। राजा ने तीनों भाइयों को अपनी हार्दिक कृतज्ञता जतायी। उसने तीनों भाइयों के हाथ पकड़ते हुए कहा ''बेटो, आप तीनों मेरी पुत्री को जीवन प्रदान करनेवाले स्वर्ग लोक से पधारे देवता हैं। आप तीनों को तब तक मेरे ही घर में रहकर मेरा आतिथ्य स्वीकार करना होगा, जब तक मेरी पुत्री का विवाह न हो।'' तीनों भाइयों ने राजा की प्रार्थना स्वीकार कर ली।

किन्तु एक गंभीर समस्या आ खड़ी हुई। राजा ने घोषणा की थी कि जो मेरी बेटी को बचायेगा, उससे उसका विवाह करावूँगा। इस घोषणा के अनुसार इन तीनों में से किसी एक से बेटी की शादी करानी होगी। राजा ने निर्णय ले लिया कि निरुपमा देवी का व्याह इन तीनों में से ही किसी एक से अवश्य करूँगा। राजा ने मंत्री को यह जिम्मेदारी सौंपी। उन्होंने कहा कि वे स्वयं निर्णय लें कि इन तीनों में से किस युवक से राजकुमारी का विवाह हो।

तीनों भाइयों की बातें सुनने के बाद मंत्री निर्णय नहीं ले पाया कि राजकुमारी का विवाह इन तीनों में से किससे हो। वह दुविधा में पड़ गया। वह सोचने लगा ''इन तीनों में से किसने राजकुमारी को मौत से बचाया? जयपाल अगर दर्पण न देखता तो उसे पता ही नहीं लगता कि वह व्याधि-ग्रस्त है। विजय का कालीन नहीं होता तो सही समय पर पहुँच नहीं पाते। अगर आ भी जाएँ तो जय के नींबू के बिना उसके बचने का कोई सवाल ही नहीं उठता।''

समस्या के परिष्कार के लिए उसने भाइयों से कहा ''तुम आपस में तय कर लो और अपना निर्णय सुनाओ कि तुममें से कौन राजकुमारी से विवाह करेगा।'' आज तक कभी भी तीनों में झगड़े नहीं हुए। अभिप्रायों में भिन्नता नहीं आयी। पर अब तीनों में से हर कोई दावा करने लगा कि राजकुमारी मेरी पत्नी होगी।

तब इस विषम परिस्थिति को देखते हुए मंत्री ने राजा से कहा "महाप्रभू, यह समस्या तार्किक ही सुलझा सकते हैं। सभा बुलायी जाए और वे ही सोच-विचारकर अपना निर्णय सुनाएँ।" राजा ने सम्मति दी।

थोड़े ही दिनों में सभा का आयोजन हुआ। बहुत दिनों तक वाद-विवाद होते रहे। किन्तु समस्या का कोई परिष्कार सुझाया जा नहीं सका। जैसी थी, वैसे ही रह गयी। आख़िर निरुपमा देवी ने हस्तक्षेप करते हुए सभासदों से विनती की कि इस समस्या के परिष्कार का मार्ग सुझाने में उसे भी मौक़ा दिया जाए। तार्किकों को उसकी बातों पर आश्चर्य हुआ। उन्होंने सोचा, जिस समस्या को हम तार्किक ही सुलझा नहीं पाये, भला यह स्त्री क्या सुलझा सकेगी।

निरुपमा देवी ने कहा "मेरा विचार है कि आप सब लोगों के सोचने की पद्धति सही नहीं है। आप लोगों का वितर्क है कि इन तीनों भाइयों में से किस भाई की वजह से मैं जीवित हुई, इनमें से कौन अधिक जिम्मेदार है। मैं मानती हूँ कि तीनों समान रूप से जिम्मेदार हैं। परंतु एक मुख्य विषय को आपने भुला दिया। मानती हूँ कि जयपाल के दर्पण ने, विजय के कालीन ने तथा जय के नींबू ने मुझे प्राण-दान दिया। अब प्रश्न यह है कि इन तीनों में से किसने मेरे लिए बड़ा त्याग किया? इस प्रश्न पर आपने ध्यान नहीं दिया। इस मुख्य विषय को आपने भुला दिया। जयपाल का दर्पण अब उसके पास सुरक्षित है। अब भी उसमें वह दूसरों को देख सकता है। विजय का कालीन विजय ही के पास है। उस पर बैठकर अब भी वह जहाँ जाना चाहता है, जा सकता है। पर जय का नींबू न रहा। उसका ख़र्चा हो गया। उससे अब और किसी को ज़िंदा नहीं कर सकता। अब आप ही निर्णय करें कि इन तीनों में से मुझसे विवाह रचाने की योग्यता किसे है, इसका हक़दार कौन है?"

निरुपमा देवी के बुद्धि-कौशल की सबने वाहवाही की। उसका विवाह जय से बड़े ही वैभव के साथ संपन्न हुआ।

सब प्रकार से साथ देनेवाले अपने भाइयों का आदर-सम्मान किया जय ने। जयवर्मा भी अपने योग्य पुत्रों को देखकर बहुत ही हर्षित हुआ।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता : : पुरस्कार रु. १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, अप्रैल, १९९७ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

S.G. SESHAGIRI
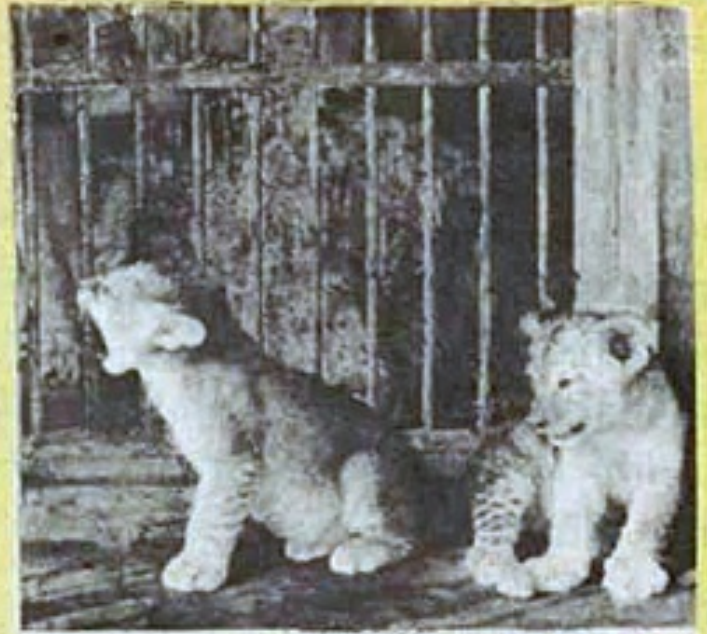
S.G. SESHAGIRI

✷ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ✷ '२८ फरवरी, ९७ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ✷ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा । ✷ दोनों परिनियोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास - २६.

दिसंबर, १९९६ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **बिन पानी के कैसे पेड़ हरे**

दूसरा फोटो : **जल में परछाँई देख डरे**

प्रेषक : **अंकिता शर्मा**

श्री अरुण कुमार शर्मा, १५७-, न्यू स्टेशन रोड, न्यू धमाली बाडी, हिन्दमोटर - ७१२ २३३, जिला हुगली, प.बं.

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चंदा : रु. ७२/-

चन्दा भेजने का पता :

डाल्टन एजन्सीज़, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process private Ltd., 188, N.S.K. Salai, Madras - 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras - 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

एल आई सी यानी सुरक्षा
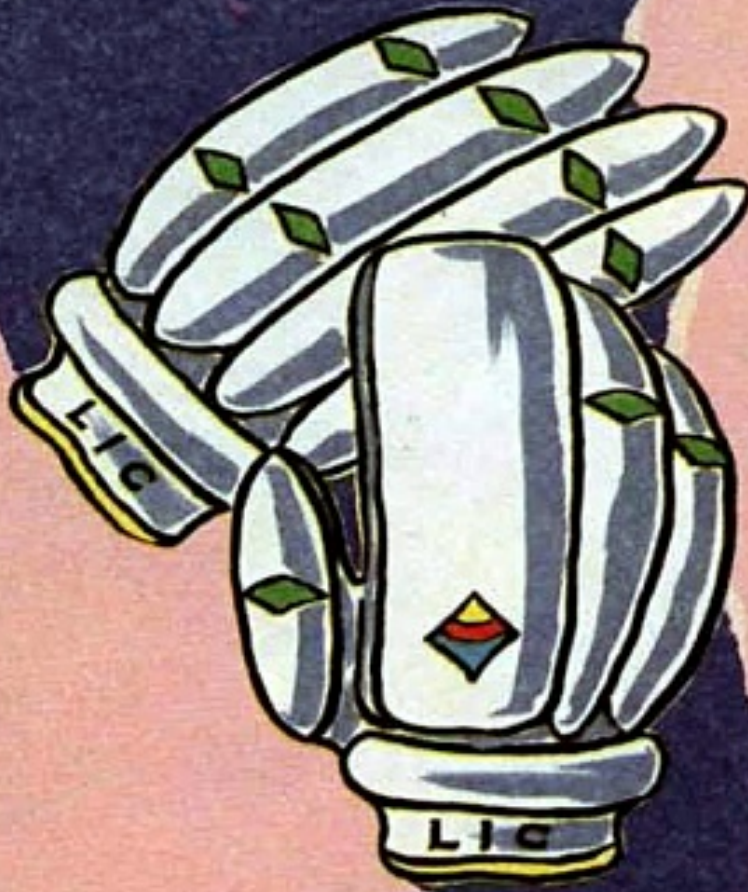
उछलती हुई बॉल जब अचानक आपसे आ टकराती है, तो आपके दस्ताने सिर्फ़ आपके हाथों को सुरक्षित रखते हैं. लेकिन, एलआईसी - जीवन बीमा निगम आपको देता है पूरी सुरक्षा, ज़िंदगी भर के लिए. पूछिए अपने माता-पिता से. वे आपको बताएंगे एलआईसी पॉलिसी का महत्व. और यह भी कि यह पॉलिसी किस प्रकार आपको पूरी तरह सुरक्षित रखती है. क्योंकि एलआईसी रखती है आपका खयाल.

भारतीय जीवन बीमा निगम

बीमा कराइए और सुरक्षा पाइए